इकाई–5 : पौधा संरक्षण (Plant Protection)

5.1 फसलों के कीट, बीमारियाँ, सूत्रकृमि एवं चूहे नियंत्रण का महत्व

मनुष्य एवं पीड़कों (Pests) का संबंध प्राचीनतम है। सभ्यता के अभ्योदय होते ही मानव एवं पीड़क के संघर्ष का भी आविर्भाव हुआ किन्तु उस समय पारंपरिक खेती एवं प्राकृतिक संतुलन के कारण हानिकारक पीड़कों की आबादी स्वतः ही नियंत्रित रहा करती थी। आज परिस्थितियाँ बिल्कुल विपरीत हैं। फसलों के अधिक उपजशील प्रभेदों के आगमन तथा उन्नत कृषि प्रणाली के कारण फसल उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ कीट, व्याधि, सूत्रकृमि एवं चूहों की आबादी में भी वृद्धि हुई।

हमारे देश में पीड़कों द्वारा हर वर्ष कुल फसल उत्पादन का लगभग सात हजार करोड़ रुपये का नुकसान होता है। इसमें खरपतवारों (Weeds) द्वारा 33%, बीमारियों (diseases) द्वारा 26%, कीटों (Insects) और चूहों (Rodents) द्वारा 26% तथा सूत्रकृमि, (Nematodes), पक्षियों आदि से 15% की क्षति होती है। इसका मुख्य कारण फसलों में कीड़ों और रोगों को अनुकूल वातावरण की उपलब्धि है तथा सघन खेती में बढ़ी पैदावार के बावजूद इन आयामों का पूर्ण ध्यान नहीं रखा जाना है। वैसे तो कुछ कीट एवं रोग फसलों को हर वर्ष क्षति पहुँचाते हैं जैसे धान और मक्का में तना छेदक, दलहनी एवं सब्जी में मोजैक (Mosaic) रोग परन्तु कभी–कभी कीड़ों एवं रोगों का प्रकोप अचानक इतना बढ़ जाता है कि पूरी फसल नष्ट हो जाती है। टिड्डा (Locust) के झुंड आने पर कोई भी फसल नहीं बच पाती है। राजस्थान, गुजरात एवं महाराष्ट्र में सफेद ग्रब (White grub) के प्रकोप से मूँगफली की खेती बन्द करनी पड़ी। बिहार में चना की खेती फली छेदक कीट के प्रकोप से कम होने लगी। किसी–किसी वर्ष आम के मधुआ कीट, धान में सैनिक कीट एवं भूरा मधुआ कीट के प्रकोप से पूरी फसल नष्ट हो जाती है। सन् 1845 में आलू की पिछात अंगमारी रोग के कारण आयरलैंड में भयंकर अकाल पड़ा। श्रीलंका में कॉफी का हरदा रोग (Rust) के प्रकोप के कारण कॉफी की जगह चाय की खेती होने लगी। सन् 1943 में भूरे पर्ण चित्ती (Blast) रोग से बंगाल में धान की फसल नष्ट हो गई जिससे बंगाल में अकाल पड़ गया जिसको बंगाल फेमिन के नाम से जाना जाता है।

सूत्रकृमि या नेमाटोड का प्रकोप भी कृषि फसलों जैसे– भिंडी, बैंगन, टमाटर, कद्दू, आलू, गेहूँ, धान, ईख एवं फल वृक्षों पर होता है। कभी–कभी सूत्रकृमि के आक्रमण के फलस्वरूप फसलों को भारी क्षति होती है। आक्रांत पौधों को उचित मात्रा में भोजन तथा पानी नहीं प्राप्त हो पाता है, जिससे उनमें फल कम लगते हैं और कमजोर होकर सूख जाते हैं। आक्रांत पौधों की जड़ों में गाँठ पड़ जाती हैं, जो आक्रमण के अनुसार मसूर के दाने से लेकर छोटे–छोटे आँवले तक के आकारों की हो जाती हैं। सूत्रकृमि से आक्रांत गेहूँ के पौधों की पत्तियाँ तथा तना में ऐठन हो जाती हैं, बालियों में काले–भूरे रंग के गोल दाने बन जाते हैं।

चूहे भी फसलों को हानि पहुँचाने वाला एक प्रमुख शत्रु हैं। खड़ी फसल से ही अनाज खाना प्रारम्भ कर देते हैं तथा खलिहानों, घरों एवं अनाज भंडार गृहों में भी ये अनाज को बहुत नुकसान पहुँचाते हैं। एक चूहा अपने वजन का 10 प्रतिशत अनाज एक दिन में खा जाता है तथा इससे कई गुणा अनाज को कुतरकर एवं अपने बालों तथा मल–मूत्र से दूषित कर देता है।

उन्नत किस्में ज्यादा उर्वरक व पानी मिलने से अधिक हरी तथा नम होने के कारण कीटों एवं बीमारियों को आकर्षित करती हैं तथा इनकी वृद्धि इन पर ज्यादा होती है। अल्पकालिक होने के कारण इनसे साल में दो या तीन फसलें ली जाती है जिससे कीटों को सारा साल बिना रोकटोक भोजन उपलब्ध रहता है और उनका प्रजनन सतत् चलता रहता है। एक ही फसल या किस्म को ज्यादा क्षेत्रफल में उगाने से कीटों को भोजन पाने में कोई कठिनाई नहीं होती तथा उनके लिए पर्यावरण प्रतिरोध कम हो जाता है, जिससे वे ज्यादा संवर्धन करते हैं। अल्पकालिक किस्मों के बुआई के समय में परिवर्तन तथा फसल में परिवर्तन ने भी कई–नई कीट एवं रोग समस्याएं पैदा कर दी हैं। गैर–पारम्परिक क्षेत्रों में नई फसल का उत्पादन शुरू करने से भी कीट एवं रोग समस्याओं में बढ़ोतरी हुई है। अधिकतर उन्नत किस्मों में कीट एवं रोग प्रतिरोधी शक्ति बहुत कम है क्योंकि इनका प्रजनन सिर्फ उच्च उत्पादन गुणों को ध्यान में रखकर किया गया है जिसके कारण ये पारम्परिक किस्मों के तुलना में कीटों एवं रोगों से ज्यादा प्रभावित होती है। जिन किस्मों में कीट एवं रोग प्रतिरोधी शक्ति है उनका भी संकीर्ण आनुवांशिक आधार होने से कीटों एवं रोगों के नए जीव प्रारूप पैदा हो गए हैं जो प्रतिरोधी किस्मों को भी नुकसान करने की क्षमता रखते हैं। जैविक नियंत्रण में लगे परजीवी व परभक्षी पर रसायनों के बुरे प्रभाव से प्राकृतिक संतुलन बिगड़कर हानिकारक कीटों एवं रोगों के पक्ष में हो गया। प्राकृतिक संतुलन बिगड़ने से मुख्य तथा गौण दोनों ही प्रकार के कीटों एवं रोगों की महामारी फैलती है। जैविक नियंत्रक जीवों की अनुपस्थिति में रसायनों का ज्यादा प्रयोग करना पड़ता है जिससे कीटों एवं रोगों में जीवनाशी रसायनों के प्रति प्रतिरोध उत्पन्न हो जाता है। जैविक नियंत्रक जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव, मुख्य व गौण कीटों एवं रोगों की महामारी फैलना तथा जीवों में कीटनाशक प्रतिरोध एक दूसरे से संबंधित क्रियाएं हैं। परस्पर प्रतिस्पर्धा का कम होना तथा रसायनों के प्रयोग से फसल की गुणवत्ता में सुधार भी कीटों एवं रोगों की महामारी फैलाने में योगदान देते हैं। रसायनों से कीट एवं रोग नियंत्रण एक महंगा

सौदा बनता जा रहा है। आंध्रप्रदेश में 1988 में कपास के कीटों के नियंत्रण में कीटनाशी रसायनों की असफलता से निरूत्साहित होकर किसानों द्वारा आत्महत्या करना बहुत ही दुखद दुर्घटना है। जीवनाशी रसायनों से परागण कीटों जैसे मधुमक्खियों पर बुरा प्रभाव पड़ने से पर–परागण में कमी से उपज काफी कम हो जाती है। भोजन द्वारा कीटनाशकों के शरीर में प्रवेश से मनुष्यों में कई बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं। रसायनों द्वारा पर्यावरण प्रदूषण पक्षियों, मछलियों तथा अन्य वन्य प्राणियों पर भी दुष्प्रभाव पड़ता है।

समेकित नाशीजीव प्रबंधन आर्थिक और पर्यावरण वास्तविकताओं के अनुकूल कृषि तकनीकों का ऐसा समन्वय है जो सभी तरीकों को मित्रातापूर्ण ढंग से कीट व्याधियों और रोगों को आर्थिक हानि स्तर से नीचे रखने में किया जाता है। इस पद्धति का विकास 1959 मे अमेरिकी वैज्ञानिक वी.एम. स्टर्न ने अपने सहयोगियों के साथ किया था। शुरू में यह जैविक नियंत्रण और कीटनाशकों का मिलाजुला प्रयास था, परंतु आज समेकित नाशीजीव प्रबंधन एक संपूर्ण फसल तकनीक के रूप में उभरा है जिसमें जमीन की भौतिक, ससायनिक और भौगोलिक स्थिति देखते हुए फसल का चुनाव और जमीन की उर्वरता, सामाजिक तथा व्यावसायिक समस्याओं के मद्देनजर सही फसल का चुनाव, बीजोपचार, पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ जैसे गर्मी में भूमि की जुताई, फसल की निराई–गुड़ाई, सही समय पर सिंचाई, फसलचक्र का चुनाव तथा आज की सभी नई तकनीकों के समन्वयन से किया जाता है। समेकित प्रबंधन अत्यंत फसल विशेष और स्थान विशेष तकनीक है। समेकित कीट प्रबंधन में जीवनाशी रसायन भी एक मुख्य अवयव है लेकिन इसका प्रयोग तभी करना चाहिए जब नाशी जीव आर्थिक हानि करने के स्तर पर पहुंच जाय। सही रसायन का चुनाव, अनुशंसित मात्रा तथा प्रयोग विधि की जानकारी से रसायनों से होने वाले कुप्रभाव को कम किया जा सकता है।

प्रश्नावली :

1. कीट एवं रोग के प्रकोप के क्या कारण है ?
2. पीड़कनाशकों के दुष्प्रभाव क्या है ?
3. पीड़कनाशकों के दुष्प्रभाव से कैसे बचा जा सकता है ?
4. फसल पर चूहों का आक्रमण कब शुरू होता है ?
5. सूत्रकृमि फसलों को किस तरह हानि पहुँचाते हैं ?

खाली जगहों को भरें :

1. वातावरण में .....एवं .....कीड़ों की वृद्धि में सहायक हैं।
2. पीड़कनाशी के अंधाधुंध प्रयोग से .....कीट एवं ..... कीट भी मर जाते हैं।
3. गर्मी में खेत की .....से मिट्टी जनित कीट एवं रोगकारक धूप एवं चिड़ियों के संपर्क में आ जाते हैं।
4. .....खाद के प्रयोग से कीट एवं रोग का आक्रमण बढ़ जाता है।
5. .....पद्धति का विकास 1959 में अमेरिकी वैज्ञानिक ..... ने किया था।
6. जब कीट एवं रोग का प्रकोप आर्थिक हानि के स्तर पर पहुँच जाता है तो इनका नियंत्रण ..... से संभव होता है।

5.2 फसलों के मुख्य हानिकारक कीट एवं रोग

धान के हानिकारक कीट

धान हमारे देश की खरीफ की मुख्य फसलों में से एक है। धान के लिए गर्म और नम वातावरण की आवश्यकता होती है और यही वातावरण कीट–पतंगों की वृद्धि और प्रजनन के लिए भी उपयुक्त है। धान की फसल को नुकसान पहुँचाने वाले निम्नलिखित मुख्य कीट हैं :–

1. **तना/घड़ छेदक (Stem borer) :** इस कीट का वैज्ञानिक नाम सीरपोफैगा इनसरटुलास (*Scirpophaga incertulas*) है।घड़ छेदक कीट के वयस्क मादा के अगले पंख पीले रंग के होते हैं जिनपर काला धब्बा होता है और नर कीट के पंख हल्के भूरे रंग के होते हैं।



तना छेदक से आक्रांत धान के पौधे

इस कीट के जीवन काल में चार अवस्थाएँ होती हैं–अंडा (Egg), शिशु (लार्वा Larva), प्यूपा (Pupa) एवं वयस्क (Adult)। शिशु कीट ही फसल को हानि पहुँचाते हैं।

शिशु (पिल्लू) कीट तने में छेदकर प्रवेश कर अंदर के भाग को खाते हैं। शुरू की अवस्था में बीच का (शीर्ष) भाग सुख जाता है जबकि (Deed Heart) निचली पत्तियाँ हरी रहती हैं। सुखे शीर्ष को डेड हर्ट कहते हैं, जिसे आसानी से खींचा जा सकता है। बालियाँ निकलने की अवस्था में शिशु के आक्रमण होने पर संपूर्ण बालियाँ सफेद हो जाती हैं तथा दाने नहीं बनते हैं।

प्रबंधन :

(i) फसल के जड़ों के अवशेष को पहली जुताई के समय हटा देना चाहिए।

(ii) मादा कीट अपने अंडे पत्ती की फुनगी के पास देती हैं। फुनगी की तरफ कुछ भाग काटकर पौधा की रोपाई करने से आक्रमण कम हो जाता है।

(iii) रोपाई के 30–35 दिनों के बाद एसीफेट 75% दवा का 500 ग्राम/हे0 या मोनोक्रोटोफॉस 36 ई0 सी0 का 1 ली0/हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

2. **गंधी बग (Gundhi Bug) :** इसका वैज्ञानिक नाम लेप्टोकोरिसा ऐक्यूटा (*Leptocorisa acuta*) है। यह कीट लंबा और पीलापन लिए हरा होता है। यह एक प्रकार की तीखी दुर्गन्ध छोड़ता हैं। इस कीट के जीवन–काल में तीन अवस्थाएँ होती हैं, अंडे, निम्फ एवं वयस्क। इस कीट के निम्फ (शिशु) एवं वयस्क दोनों ही बालियों के दूधिया अवस्था में दानों से दूध को चूस लेते हैं फलतः दाने खखरी हो जाते हैं।



गंधी बग

प्रबंधन :

(i) धान के खेतों के आसपास खड़ी घासों तथा खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए जिससे इनपर पनपने वाले कीट धान की फसलों पर आक्रमण न कर सकें।

(ii) ये कीट रोशनी की ओर आकर्षित होते हैं अतः उन्हें प्रकाश के चारों ओर एकत्रित कर नष्ट कर देना चाहिए ।

(iii) क्वीनालफॉस 1.5% या मिथाईल पाराथियान (फ़ौलीडॉल) 2% धूल का 20–25 किलोग्राम भुरकाव सुबह में करना चाहिए।

3. **हिस्पा :** इस कीट का वैज्ञानिक नाम डिक्लैडिस्पा आरमीजेरा (*Dicladispa armigera*) है।

यह नीले काले रंग का छोटा कीट है जिसके शरीर पर छोटे–छोटे काँटे होते हैं। इसके शिशु (सुंडी) एवं वयस्क दोनों ही पत्तियों के हरीतिमा को खाते हैं जिससे पत्तियों पर उजली धारी बन जाती है। आक्रांत फसल का बढ़वार रूक जाता है।



हिस्पा



आक्रांत पौधे

प्रबंधन :

(i) पत्तियों के फुनगी को काटकर रोपाई करने से अंडे खेत में नहीं पहुँच पाएँगे।

(ii) मोनोक्रोटोफास 36 ई0 सी0 का 1 ली0 / हे0 या क्लोरपाइरीफॉस 20 ई0 सी0 का 2.5 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

4. **भुरा मधुआ (Brown Plant Hopper) :** इसका वैज्ञानिक नाम नीलपरवता ल्युगेन्स (*Nilaparvata lugens*) है।

इस कीट के वयस्क एवं निम्फ छोटे–छोटे भूरे रंग के होते हैं जो पौधों के आधार के पास तनों से रस चुसकर नुकसान पहुँचाते हैं। धान के पौधे सुख जाते हैं। यह पहले एक स्थान पर या छिटफुट स्थान पर रहता है फिर सारे खेत में फैल जाता है जिसे हॉपर बर्न कहा जाता है।



भुरा मधुआ



हॉपर बर्न

प्रबंधन :

(i) ये कीट रोशनी की ओर आकर्षित होते हैं अतः उन्हें प्रकाश प्रपंच लगाकर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) आक्रांत खेत का पानी बहा देना चाहिए।

(iii) इमीडाक्लोप्रीड 17.8 एस0 एल0 दवा का 250 मिली लीटर / हे0 की दर से छिड़काव तना पर करना चाहिए।

5. **हरा मधुआ (Green leaf hopper) :** इसका वैज्ञानिक नाम नेफोटेटिक्स नीग्रोपीक्टस (Nephotettix nigropictus) है।

यह कीट हरे रंग का होता है। इसके पंखों पर काले धब्बे पाये जाते हैं। इस कीट के निम्फ (शिशु) तथा वयस्क दोनों ही पत्ती के रस चूसते हैं। जिससे पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं।



हरा मधुआ

प्रबंधन :

भूरा मधुआ की तरह।

6. **केसवर्म (Rice Caseworm) :** इसका वैज्ञानिक नाम निम्फ्यूला डिपंक्टेलिस (*Nymphula depunctalis*) है।

इस कीट का वयस्क पतिंगा छोटा, नाजूक होता है जो बर्फ–सा सफेद होता है। इसके पंख सफेद या हल्के भूरे एवं पीले रंग की लहरदार धारियाँ से युक्त होता है। पानी लगे खेतों में आक्रमण ज्यादा होता है। पत्तियों की ऊपरी हरियाली को खा जाते हैं। ज्यादा प्रकोप होने पर पौधा बिल्कुल सफेद दिखने लगता है। ये पानी के ऊपर की नलिकाओं के अंदर काफी संख्या में तैरते पाये जाते हैं।



केसवर्म

प्रबंधन :

(i) केसवर्म कीट का प्रकोप होने पर एक बड़ी रस्सी लेकर उसे किरासन तेल में डुबा दीजिए। फिर उसे दोनों तरफ से पकड़कर धान के खेत में एक तरफ से दूसरे तरफ तक पौधे से सटाकर चलाइए। इससे केसवर्म कीट खेत के पानी में गिर जायेंगे, फिर पानी को खेत से बाहर बहा देना चाहिए।

(ii) अधिक प्रकोप होने पर क्वीनालफॉस 25 ई0 सी0 का 2 ली0 / हे0 या मोनोक्रोटोफॉस 36 ई0 सी0 का 1 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव शाम के समय करना चाहिए।

7. **सैनिक कीट (Army Worm) :** इस कीट का वैज्ञानिक नाम मिथिम्ना सेपेराटा (*Mythimna separata*) है।

इस कीट के वयस्क हल्के भूरे रंग के पतंगे होते हैं एवं शिशु (इल्ली या पिल्लू) सुस्त, गहरे हरे रंग के होते हैं। शिशु कीट अंधेरा होने के साथ ही पौधे पर चढ़कर धान की बालियों को काटकर गिरा देते हैं। ये दिन में घास या फसल के जड़ों में छिपे रहते हैं।



सैनिक कीट

प्रबंधन :

क्वीनलफॉस 25 ई0 सी0 का 2ली0 / हे0 या मोनोक्रोटाफास 36 ई0 सी0 का 1 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

8. **पत्ती लपेटक (Leaf folder) :** इस कीट का वैज्ञानिक नाम नेफालोक्रोसिस मेडिनेलिस (*Cnaphlocrosis medinalis*) है।पत्ती लपेटक के पिल्लू (शिशु) पीले–हरे रंग के होते हैं। ये कीड़े पत्तियों के किनारे को रेशम–समान धागों से बाँध देते हैं। जिसके कारण पत्ती नली के आकार की दिखाई पड़ती है।



पत्र – लपेटक का लार्वा

प्रबंधन :

(i) इस कीट से प्रभावित खेत के फसल की ऊपरी पत्तियों की कटाई कर देना चाहिए।

(ii) डायमेथोएट 30 ई0 सी0 दवा का 1 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए ।

9. **ग्रास हॉपर या फड़का या फनगा (Grass Hopper) :** इसका वैज्ञानिक नाम हाइरोग्लाइफस बैनियन या हाइरोग्लाइफस निग्रोरेप्लेक्टस (*Hieroglyphus banian or H. nigrorepletus*) है।

यह बहुवनस्पति भक्षी कीट है क्योंकि यह विविध प्रकार की फसलों एवं अन्य पौधों को खाता है। यह कीट हरे या पीलापन लिए हरे रंग का 3 से0 मी0 से 4 से0 मी0 लंबा होता है। ये पत्तियों के किनारे काटकर खाते हैं।

प्रबंधन :

(i) इस कीट से बचाव हेतु फसल कटने के तुरत बाद खेत को गहरी जुताई कर देना चाहिए।

(ii) खेत में पानी भर देने से इसके अंडे खत्म हो जाते हैं।

(iii) मेढ़ की खुदाई कर देने से भी इसके अंडे खत्म हो जाते हैं।

(iv) सुबह में मिथाईल पाराथियॉन (फॉलीडॉल) 2% धूल का 20–30 किलोग्राम प्रति हेक्टर की दर से भूरकाव करना चाहिए।

(v) रोपाई हेतु खेत की तैयारी के समय अन्य खादों के साथ 5 क्विंटल नीम की खल्ली प्रति हेक्टर की दर से मिला देना चाहिए।

धान के हानिकारक रोग

1. **भूरा धब्बा रोग (Brown Spot) :**

रोगजनक : हेलमिन्थो–स्पोरियम ओराइजी (*Helminthosporium oryzae*)

लक्षण : पत्तियों पर अधिक संख्या में गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। ये धब्बे तने, बालियों पर बनते हैं। रोग के ज्यादा प्रकोप होने पर बालियाँ नहीं निकलती हैं,

अगर बालियाँ निकलती भी हैं तो उनमें दानें नहीं बनते हैं।



भूरा धब्दा

प्रबंधन :

(i) एग्रोसन जी०एन० या सेरेसन से बीज उपचार (2ग्रा० / किलो बीज) करना चाहिए।

(ii) ताम्रवर्गी कवकनाशी (3ग्रा० प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

(iii) रोग प्रतिरोधी किस्मों को लगाना चाहिए।

2. **धान का ब्लास्ट रोग (Blast of Rice) :**

रोग जनक : पाइरीकुलेरिया ओराइजी (*Pyricularia oryzae*)

लक्षण : पत्तियों पर आँख या नाव के आकार के भूरे धब्बे बनते हैं,बाल दंड (Neck) के आक्रांत



धान का ब्लास्ट

होने पर बालियों का झुकना शुरू हो जाता है। पुष्प एवं दानों पर धब्बों के कारण दानों का रंग काला हो जाता है।

प्रबंधन :

(i) मृदाजनित रोग, रोगी पौधों के अवशेष को जमाकर जलाना चाहिए।

(ii) एग्रोसन जी०एन० या सेरेसन से बीज उपचार (2 ग्राम प्रति किलो बीज) करना चाहिए।

(iii) हिनोसान 30 ई०सी० 1 लीटर को 1000 लीटर पानी में या डायइथेन एम 45 का 2.5 कि०ग्रा० 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए।

(iv) रोग प्रतिरोधी किस्म लगाना चाहिए।



फाल्स स्मट

3. फाल्स स्मट रोग (False smut) :

रोग जनक : यस्टेलिजिनोयडी भाइरेन्स (*Ustilaginoidea virens*)

लक्षण : संक्रमित दाने बड़े, हरे–काले रंग के हो जाते हैं एवं उसमें से बीजाणु, धूल की तरह उड़ते हैं।

प्रबंधन :

ताम्रवर्गी कवकनाशी का छिड़काव (3ग्रा० प्रति लीटर पानी) करना चाहिए।

4. जीवाणु अंगमारी रोग (Bacterial Blight) :



जीवाणु अंगमारी

रोग जनक : जैन्थेमोनास ओराइजी (*Xanthomonas oryzae*)

लक्षण : रोगग्रस्त पत्तियों पर पहले छोटे–छोटे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। बाद में लंबी–लंबी धारियाँ बन जाती है। यह रोग पत्ती के अग्रभाग से नीचे की ओर किनारे–किनारे फैलते हैं। पौधे में बीज बनने के समय रोग का प्रकोप अधिक होता है।

प्रबंधन:

(i) रोग रोधी किस्म लगाना चाहिए।

(ii) रोग ग्रसित पत्तियों को जला देना चाहिए।

(iii) एग्रोसन जी०एन० या सेरेसन से बीज उपचार (2 ग्राम प्रति किलो बीज) करना चाहिए।

(iv) गर्म जल (52-54°C) में 30 मिनट तक बीज डुबाना चाहिए।

(v) स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 50 ग्राम एवं कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2½ किलोग्राम को 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए।

5. टुंगरो रोग (Tungro Disease) :

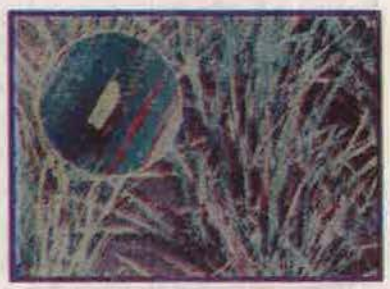

टुंगरो रोग

रोग जनक : राइस टुंगरो वायरस:

वाहक : राइस ग्रीन लीफ हॉपर (हरा मधुआ)।

लक्षण : पौधे का बढ़वार कम हो जाता है एवं पत्तियाँ नारंगी रंग की हो जाती हैं। ये पत्तियों के अग्रभाग में शुरू होकर पहले एक किनारे से प्रभावित करते हैं।

प्रबंधन :

(i) रोग फैलाने वाले कीटों को कीटनाशकों द्वारा नियंत्रण करना चाहिए।

(ii) रोगी पौधे को निकाल कर हटा देना चाहिए।

(iii) रोग प्रतिरोधी किस्म लगाना चाहिए।



खैरा रोग

6. खैरा रोग (Khaira Disease) :

रोग जनक : जस्ते की कमी।

लक्षण : पौधशाले में पौधे पीले हो जाते हैं एवं वृद्धि रूक जाती है। पत्तियाँ तथा जड़ें भूरे रंग की हो जाती हैं। पौधे भूरे रंग के दिखाई पड़ने लगते हैं।

प्रबंधन :

जिंक सल्फेट 5 किलोग्राम तथा 2.5 किलोग्राम चूना को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से पौधों पर 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए।

गेहूँ के हानिकारक कीट



जड़ों के पास पिल्लू

1. गेहूँ का कजरा कीट (Cutworm) :

कजरा कीट का वैज्ञानिक नाम एग्रोटीस इप्सिलॉन (*Agrotis ipsilon*) है।

जरा कीट को कटुआ पिल्लू भी कहा जाता है। वयस्क पतंगा हल्के भूरे रंग के होते हैं जो प्रकाश की ओर बड़ी संख्या में आकर्षित होते हैं।

इस कीट के पिल्लू (शिशु) छोटे पौधों को काटकर हानि पहुँचाते हैं। ये दिन के समय भूमि में मिट्टी के ढेलों और दरारों में छिपे रहते हैं और रात के समय में पौधों को भूमि के सतह से काटकर भूमि के अंदर खींच ले जाते हैं और दिन के समय उन कटे हुए भागों को खाते रहते हैं।

प्रबंधन :

(i) क्लोरपायरिफॉस 20 ई0 सी0 से बीजोपचार (8 मि0 ली0 / किलोग्राम बीज) करके बुआई करना चाहिए।

(ii) खड़ी फसल में आक्रमण होने पर क्लोरपायरिफॉस 3 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।



दीमक

2. दीमक (Termite) :

दीमक की एक प्रजाति का वैज्ञानिक नाम (i) ओडोन्टोटर्मस ओबेसस (*Odontoterms obesus*) एवं दूसरी प्रजाति का माइक्रोटर्म्स ओबेसस (*Microterms obesus*) है।

इसे सफेद चींटी भी कहते हैं। यह एक बहुभक्षी कीट है और जिन वस्तुओं में सेलूलोज होता है उन सबको खाती है। यह लकड़ी, कागज को तो खाती ही है साथ ही पौधों की जड़ों को खाकर नुकसान पहुँचाती है। ये सामाजिक जीवन व्यतीत करती है। राजा, रानी, मजदूर और सैनिक–इन चार वर्गों से इनका समाज बनता है। राजा और रानी पंखयुक्त होते हैं जो शिशु पैदा करने की क्षमता रखते हैं। शेष दीमक पंखरहित होते हैं। सबसे ज्यादा नुकसान दीमक के मजदूर वर्ग द्वारा किया जाता है। ये गेहूँ, चना, जौ, जई, दलहन, तेलहन, ईख, साग–सब्जी आदि फसलों के अलावा आम, लीची, नींबू एवं अन्य फलों के पौधों को नुकसान पहुँचाती हैं। दीमक का आक्रमण जमीन की बनावट, भूमि में नमी, भूमि का तापक्रम इत्यादि बातों पर निर्भर करता है। ये बालू वाली मिट्टी एवं दोमट मिट्टी में रहना विशेष पसंद करते हैं। ये जमीन में बोए गये बीज के गुदे को इस तरह खा जाती है कि केवल बीज का छिलका ही बचा रह जाता है, जिससे पौधे उगते नहीं हैं, यदि उगते भी हैं तो उनका विकास नहीं होता है, जिसके कारण पौधे सूख जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) खेत में कच्ची गोबर की खाद नहीं डालनी चाहिए।

(ii) जहाँ कहीं भी दीमक के ढेर पाये गए हों उनको नष्ट कर देना चाहिए।

(iii) हल्की असिंचित भूमि में जहाँ दीमक की समस्या रहती हो वहाँ खेत की अंतिम जुताई के समय क्लोरपायरिफॉस 20 ई0 सी0 दवा का 3–4 लीटर प्रति हेक्टर की दर से मिट्टी में मिलाकर उपचारित करना चाहिए।

(iv) क्लोरपायरिफॉस 20 ई0 सी0 से बीजोपचार (8 मि0 ली0 / कि0 ग्रा0 बीज) कर बुआई करना चाहिए ।

(v) खड़ी फसलों में अगर दीमक का आक्रमण हो गया हो तो क्लोरपायरिफॉस 20 ई0 सी0 दवा का 3 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए ।

गेहूँ के रोग

1. अनाकृत कलिका (Loose Smut लूज स्मट):

रोग जनक : यूस्टिलागो ट्रिटिसी (*Ustilago tritici*)

लक्षण : यह एक आंतरिक बीज जनित रोग है। संक्रमित पौधों में बालियाँ पहले निकलती हैं एवं बालियों में दानों की जगह कालाचूर्ण बन जाता है।



अनाकृत कलिका

प्रबंधन :

(i) रोगग्रस्त बालियों को हटा देना चाहिए।

(ii) बीज को धूप में सुखाना चाहिए।

(iii) बीटावैक्स या वेविस्टिन (दो ग्राम प्रतिकिलो बीज) से बीज उपचार करना चाहिए।

(iv) रोग प्रतिरोधी किस्म लगाना चाहिए।

2. पत्र अंगमारी रोग (Leaf Blight):

रोग जनक : अल्टरनेरिया ट्रिटिसीना (*Alternaria triticina*)

लक्षण : सर्वप्रथम रोग के लक्षण पत्तियों पर छोटे–छोटे भूरे एवं धूसर रंग के अंडाकार धब्बे बनते हैं। बाद में पत्तियाँ झुलसने लगती हैं।



पत्र अंगमारी रोग

प्रबंधन :

(i) बीज को गरम पानी (52°C) में दस मिनट डुबाकर उपचार करना चाहिए।

(ii) बीटावैक्स / बेविस्टीन (2 ग्रा० प्रति किलो बीज) से उपचार करना चाहिए।

(iii) मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए।

(iv) रोग प्रतिरोधी किस्म लगाना चाहिए।

3. काला हरदा रोग (Black Rust):

रोग जनक : पकसिनिया ग्रेमिनिस (*Puccinia graminis*)

लक्षण : जड़ों को छोड़कर तनों तथा पत्तियों पर पहले गहरे रंग के सूक्ष्म धब्बे बनते हैं जो बाद में बड़े एवं काले रंग के हो जाते हैं।



काला हरदा

प्रबंधन :

(i) रोग प्रतिरोधी किस्म लगाना चाहिए।

(ii) जिनेव 1.5 किलोग्राम को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

4. करनाल बंट रोग (Karnal Bunt) :

रोग जनक : निभोवासिया इंडिका (*Neovosia indica*)

लक्षण : आक्रांत पौधे के बाली में कुछ दानें आंशिक रूप से काले हो जाते हैं और उसमें से सड़ी मछली की तरह गंध आती है।



करनाल बंट

प्रबंधन :

(i) बीटावैक्स / बेविस्टीन द्वारा बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) रोग रोधी किस्म लगाना चाहिए।

(iii) फसल पर बेविस्टीन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर दो छिड़काव करना चाहिए ।

5. गेहूँ का सेहूँ रोग (Ear Cockle) :

रोग जनक : सूत्रकृमि– एनगुईना ट्रिटिसी (*Anguina tritici*)

लक्षण : पत्तियाँ मुड़ी हुई, आक्रांत बाली छोटी एवं दानों की जगह काले गांठों का निर्माण हो जाता है।



गेहूँ और सेहूँ

प्रबंधन :

(i) बीज को 20 प्रतिशत नमक के घोल में डालकर स्वस्थ बीज को निथार कर अलग कर लेना चाहिए। स्वस्थ बीज को पानी से धोकर एवं सुखाकर लगाना चाहिए।

(ii) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

मक्का, ज्वार एवं बाजरा के कीट

मक्का फसल को हानि पहुँचाने वाले मुख्य कीट हैं :–तना छेदक, प्ररोह मक्खी, एवं पत्ती लपेटक कीट

1. तना छेदक : इस कीट का वैज्ञानिक नाम काइलो पार्टेलस (*Chilo partellus*) हैं।

इस कीट के जीवन–काल की चार अवस्थाएँ होती हैं, अंडा, लार्वा (शिशु), प्यूपा (कोषावस्था) एवं वयस्क। वयस्क पतंगा (शलभ) हल्का पीलापन लिए भूरे रंग का होता है। पतंगा फरवरी एवं मार्च भर उड़ते हुए दिखाई पड़ते हैं और दिन में पत्तियों के नीचे छिपे रहते हैं। इस कीट की सूंडियाँ (शिशु) पहले पत्ती को खुरच–खुरच कर खाती है और बाद में पत्तियों में छोटे–छोटे छेद कर खाती है। इस कीट का आक्रमण अंकुरण के बाद ही पौध अवस्था में हो जाता है जिससे ऊपर की पत्तियाँ सुख जाती है और अंत में पौधा सूख जाता है। ऐसी दशा में सूखी हुई फुनगी को मृत केन्द्र (Dead heart) का बनना कहते हैं। यदि पौधा बड़ा हो गया हो तो पौधा कमजोर हो जाता है जिसके कारण तेज हवा चलने से गाठ से टूट कर गिर जाता है।इस कीट के द्वारा 25–40 प्रतिशत छोटे पौधे तथा 90 प्रतिशत तक बड़े पौधे ग्रसित हो सकते हैं।



तना छेदक से आक्रांत

प्रबंधन :

(i) कीट ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) फसल की कटाई के बाद बचे हुए अवशेषों को जला देना चाहिए।

(iii) फसल जब ठेहुने के ऊँचाई के बराबर हो जाए तब दानेदार दवा कार्बोफ्यूरान 3 जी0 का व्यवहार (7–8 दाना / गाभा)

करना चाहिए।

(iv) अधिक ऊँचे पौधों पर कार्बारिल 50 डब्लू0 पी0 का 2 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

2. प्ररोह मक्खी (Shoot fly) :



(बांये व मध्य) आक्रांत पौधे

इस मक्खी का वैज्ञानिक नाम ऐथेरिगोना सोकाटा (*Atherigrona socata*) है।

यह मक्खी घरेलू मक्खी से छोटे आकार की होती है। इस कीट की चार अवस्थाएँ होती हैं, अंडा, शिशु (मैगोट), प्यूपा एवं वयस्क। शिशु कीट ही फसल को हानि पहुँचाते हैं।

इस कीट के मैगोट (शिशु) पहले तने में छेद करते हैं और मुख्य प्ररोह को काट देते हैं जिससे बड़े पौधों में मृत केन्द्र (Dead heart) उत्पन्न हो जाते हैं और वे सूख जाते हैं। इस कीट का प्रकोप बादल घिरे दिनों में सिंचित क्षेत्रों में अधिक होता है।

प्रबंधन :

(i) कीट ग्रसित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) कार्बारिल दवा 0.2% का छिड़काव करना चाहिए।

(iii) 100 भाग बीज में 5 भाग कार्बोफ्यूरान मिलाकर बुआई करनी चाहिए।

3. पत्ती लपेटक कीट (Leaf roller) :

इस कीट का वैज्ञानिक नाम मेरास्मिया ट्रेपेजेलिस (*Marasmia trapezales*) है।

इस कीट के शलभ (पतंगा) के पंखों पर भूरी धारियाँ पाई जाती है। ये पत्तियों के डंठलों पर अंडे देती हैं जिससे शिशु निकलकर पत्तियों के ऊपरी सतह को खुरच कर खाता है और फिर उनको मोड़ना शुरू कर देता है। यह रेशम की डोरी से पत्ती को मोड़ कर बाँध देती है और अन्दर ही अन्दर पत्तियों के मृदुत्तक (Parenchyma) को खाता रहता है। खाई हुई पत्तियाँ सफेद पड़ जाती हैं। एक शिशु लगभग 5–6 पत्तियों को खाकर हानि पहुँचाता है।

प्रबंधन :

(i) मुड़ी हुई पत्तियों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) कार्बारिल 50 डब्लू0 पी0 का 2 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

मक्का के रोग

1. पौध अंगमारी रोग (Seedling Blight) :



पौध अंगमारी

रोग जनक : पिथियम एफेनीडरमेटम (*Pythium aphanidermatum*)

लक्षण : जमीन से सटे तना एवं जड़ सड़ जाने के कारण पौधे गिर जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) पानी निष्कासन का उचित प्रबंधन करना चाहिए।

(ii) थीरम या कैप्टान (3 ग्रा० प्रति किलो बीज) से बीज उपचार करना चाहिए।

2. टरसिकम अंगमारी रोग (Turcicum Leaf Blight) :


टरसिकम अंगमारी

रोग जनक : हेल्मेन्थोस्पोरियम टरसिकम (*Helminthosporium turcicum*)

लक्षण : पत्तियों पर लंबे बादामी रंग के धब्बे बनते हैं तथा पत्तियाँ जली हुए प्रतीत होती हैं। आक्रांत पौधों में भुट्टे कम बनते हैं।

प्रबंधन :

डाइथेन एम०– 45 की 2.5 किलोग्राम मात्रा 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

3. कंडवा रोग (Smut) :


कंडवा रोग

रोग जनक : अस्टिलागो मेडिस *(Ustilago maydis)*

लक्षण : पौधे के आक्रांत भाग पर पिटिका (गॉल) बनते हैं। उग्रावस्था में आक्रांत भुट्टे से काला बीजाणु चुर्ण निकलते हैं।

प्रबंधन :

(i) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(ii) आक्रांत पौधों को हटाना चाहिए।

(iii) रोग प्रतिरोधी किस्म लगाना चाहिए।

(iv) विटावैक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

4. सफेद कली रोग (White bud) :


सफेद कली रोग

रोग जनक : जस्ता की कमी

लक्षण : पत्तियों के अग्रभाग का सफेद होना।

प्रबंधन :

जिंक सल्फेट 20–25 कि०ग्रा० प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की जुताई के समय प्रयोग करना चाहिए।

5. भूरी चित्ती रोग (Brown Spot) :


भूरी चित्ती रोग

रोग जनक : फाइसोडर्मा मेडिस *(Physoderma maydis)*

लक्षण : पत्तियों पर पहले छोटे–छोटे भुरे धब्बे बनते हैं जो बाद में बड़े एवं लाल रंग के हो जाते हैं। उग्रावस्था में भुट्टे नहीं बन पाते हैं।

प्रबंधन :

(i) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(ii) उचित जल प्रबन्धन करना चाहिए।

(iii) बैविस्टीन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(iv) रोग रोधी प्रजाति लगानी चाहिए।

दलहनी फसलों के हानिकारक कीट

चना के हानिकारक कीट



आक्रांत पौधे

1. चना का फली छेदक (Gram pod borer):

वैज्ञानिक नाम हेलिकोवरपा आर्मीजेरा (*Helicoverpa armigera*) है।

वयस्क पतंगा मजबूत एवं हल्के भूरे रंग का होता है। इसके अगले जोड़ी पंखों पर बिन्दू होते हैं जो कि धारीदार रेखाएँ बनाते हैं। नीचे वृत्ताकार धब्बा पाया जाता है। पिछले जोड़ी पंख सफेद रंग के होते हैं तथा बाहरी सिरे पर काली धारी की किनारी होती है। इसके शिशु हरे रंग के होते हैं जिसके शरीर पर किनारे गहरी मोटी स्लेटी रंग की तीन धारी होती है जो कि स्थान–स्थान पर टूटी होती है। यह तीनों धारियाँ अगले से पिछले सिरे तक समानान्तर होती है।

इस कीट की छोटी शिशु या पिल्लू कुछ समय इधर–उधर पत्तियों में घूमकर फूल तथा फली में पहुँचकर उनमें छेद करके खाती है। इसकी सुंडी जब बड़ी हो जाती है तब उसे आधा भाग फली के अंदर और आधा बाहर निकला हुआ दिखाई पड़ती है। फली में शिशु का मल भी पाया जाता है। इसका प्रकोप नवम्बर से मार्च तक रहता है। एक अकेला शिशु लगभग 30–40 फलियों में छेद करके खा जाता है।

प्रबंधन :

(i) चना की फसल के कटते ही खेत की अच्छी तरह जुताई कर देना चाहिए ताकि प्यूपा ग्रीष्म ऋतु में मर जाएँ।

(ii) चना की एकल खेती के बजाय धनियाँ, तीसी, सरसों, अथवा जौ के साथ अन्तवर्तीय (4:1 के अनुपात) में करना चाहिए।

(iii) फेरोमोन ट्रेप का प्रयोग 10 ट्रैप प्रति हेक्टर की दर से खेतों में करना चाहिए।

(iv) जब 50% फूल आ जाएँ तब कोई नीन आधारित दवा या नीम बीज चुर्ण 5% घोल का छिड़काव 10 दिनों के अंतराल पर तीन बार करना चाहिए ।

(v) अत्यधिक प्रकोप होने पर क्वीनालफॉस 20 ई0 सी0 दवा का 2 ली0/हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

2. कजरा पिल्लू : गेहूँ के कजरा कीट के तरह।

दलहनी फसलों के रोग

चना

1. उकठा रोग (Wilt) :


उकठा रोग

रोग जनक : फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरियम (*Fusarium oxysporium*)

लक्षण :

(i) रोग ग्रसित पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ जाती है। पौधे मुरझाकर झुक जाती है। धीरे–धीरे संक्रमित पौधे सूख कर मर जाते हैं। यह रोग खेतों में जगह–जगह छोटे–छोटे क्षेत्रों में प्रकट होता है।

(ii) संक्रमित पौधा के तना और मुख्य जड़ का बीच से चीरने पर गहरे भूरे या काले रंग की धारी दिखाई पड़ता है।

प्रबंधन :

(i) गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करना चाहिए।

(ii) चने की बुआई अक्टूबर के अंतिम सप्ताह या नवंबर के प्रथम सप्ताह में करना चाहिए।

(iii) खेत तैयार करते समय गोबर की खाद 5 टन प्रति हे० की दर से प्रयोग करना चाहिए।

(iv) बुआई से पूर्व 1 ग्राम बीटावेक्स / वैविस्टिन कवकनाशी तथा 4 ग्राम ट्राइकोडरमा चूर्ण द्वारा प्रति कि०ग्रा० बीज की दर से बीज उपचार करना चाहिए।

(v) तीसी / धनिया के साथ मिश्रित खेती करना चाहिए।

(vi) रोगरोधी प्रजाति बोना चाहिए।

2. शुष्क जड़ विगलन रोग (Dry Root Rot) :


शुष्क जड़ विगलन

रोग जनक : राइजोक्टोनिया बटाटीकोला (*Rhizoctonia bataticola*)

लक्षण : संक्रमित पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ जाती है। रोग का अधिक संक्रमण फली एवं दाना बनने की अवस्था में होती है। संक्रमित पौधे सूखी घास की तरह हो जाती है। पौधों की जड़ें सड़कर काली पड़ जाती हैं। संक्रमित जड़ें इतनी शुष्क हो जाती हैं कि तोड़ने पर कड़क से टूट जाती है।

प्रबंधन :

(i) गर्मी (मई–जून) के समय में खेत की गहरी जुताई करना चाहिए।

(ii) जैसे ही खेत में रोग के लक्षण दिखाई पड़े, हल्की सिंचाई कर देना चाहिए।

(iii) बीज का उपचार ट्राइकोडर्मा पाउडर 4 ग्राम तथा 1 ग्राम बीटावेक्स / वैविस्टिन कवकनाशी के मिश्रण से प्रति किलोग्राम बीज की दर से करना चाहिए।

(iv) धनिया या तीसी के साथ मिश्रित खेती करना चाहिए।

(v) रोग प्रतिरोधी किस्म लगाना चाहिए।

3. स्तंभ मूल संधि विगलन रोग (Collar rot) :

रोग जनक : स्कलेरोशियम रोल्फसाई (*Sclerotium rolfsii*)

लक्षण : पौधे अंकुरण की अवस्था में ही कवक से संक्रमित हो जाते हैं। पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं।

पौधे का आधार सड़ जाता है। संक्रमित पौधों का स्तम्भ मूल संधि का विगलित (सड़ा) भाग कवक के सफेद रंग के सूत्रों से बहुधा ढंक जाता है। संक्रमण के कारण नवजात पौधे मर जाते हैं।



स्तंभ मूल संधी विगलन

प्रबंधन :

(i) गर्मी के समय (मई–जून) में खेत की गहरी जुताई करना चाहिए।

(ii) बुआई से पहले खेत में 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिए।

(iii) ट्राइकोडर्मा पाउडर तथा बीटावेक्स (4:1) 5 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से बीज उपचार करना चाहिए।

4. स्टन्ट रोग (Stunt Disease) :

रोग जनक : स्टंट ल्यूटियो विषाणु (*Stunt Luteo Virus*)

वाहक : लाही/माहू

लक्षण : पौधे की पत्तियाँ पीली, नारंगी या भूरे रंग की हो जाती है और पौधे छोटे रह जाते हैं। संक्रमित पौधे की पत्तियाँ छोटी, कड़ी एवं मोटी हो जाती है। स्तंभ मूल संधि के भाग में फ्लोयम का रंग भूरा हो जाता है। प्रारंभिक अवस्था में रोग लगने से पौधे मर जाते हैं, परंतु देर से संक्रमित पौधे में फलियाँ बहुत कम बनती हैं। यह रोग संक्रमित पौधों से दूसरे स्वस्थ पौधों में लाही (कीट) द्वारा फैलता है।



स्टन्ट रोग

प्रबंधन :

(i) संक्रमित पौधों को खेत से उखाड़ कर जला देना चाहिए।

(ii) कीट नाशी (मिथाइल डिमेटॉन/नेटासिस्टॉक्स 0.05 प्रतिशत) द्वारा रोग वाहक लाही/माहू को नियंत्रण करना चाहिए।

मटर के हानिकारक कीट

1. मटर पर्ण सुरंगक (Pea leaf minor) : इस कीट का वैज्ञानिक नाम क्रोमेटोमिया हार्टिकोला (*Chromatomyia horticola*) है।

वयस्क कीट (पतंगा) हल्के पीले रंग एवं गहरे रंग का होता है। इस कीट के चार अवस्थायें अंडे, लार्वा या सुंडी, प्यूपा एवं वयस्क होती है। शिशु (लार्वा) कीट ही हानि पहुँचाती है। यह पत्ती में सुरंग बनाकर खाता है। प्रकोप अधिक होने से पत्ती झुलसी प्रतीत होती है।

प्रबंधन :

(i) अगेती फसल और पिछात फसल में कीट का प्रकोप अधिक पाया जाता है, इसलिए फसल समय से बोनी चाहिए।

(ii) इस कीट की रोकथाम के लिए डायमेथोएट 0.02% या कार्बारिल 0.1% को 2–3 सप्ताह के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

2. मटर फली छेदक (Pea pod borer) : इस कीट का वैज्ञानिक नाम इटिएला जिन्किनेला (*Etiella zinnkenella*) है।

प्रौढ़ कीट भूरे रंग का होता है। ये अपने अंडे कच्ची फलियों की मध्य शिराओं के साथ–साथ बाह्य दलपुंज में एक–एक कर या समूहों में देती है। अंडे से शिशु निकलकर फलियों को क्षतिग्रस्त करती हैं। फली के अंदर पहुँकर यह पहले हाइलम भाग को खाती है फिर दाल के भाग को खाती है जिसमें मल भी भरा रहता है। बाद में फली चिपचिपा होकर सड़ने लगती है।

प्रबंधन :

इस कीट की रोकथाम के लिए डायमेथोएट 0.02% या कार्बारिल 0.1% को 2–3 सप्ताह के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

मटर के रोग

1. चूर्णी आसिता या बुकनी रोग (Powdery mildew):

रोग जनक : इरीसिफी पोलीगोनी (*Erysiphe Polygoni*)

लक्षण : पत्तियों की ऊपरी सतह पीली तथा नीचली सतह पर सफेद चूर्ण दिखाई पड़ती है।



चूर्णी आसिता

प्रबंधन :

(i) घुलनशील गंधक (0.3%) का 2–3 छिड़काव करना लाभकारी है।

(ii) मैन्कोजेव (0.2%) का 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

2. रतुआ / हरदा रोग (Rust):

रोग जनक : यूरोमाइसिस वीसी फेवी (*Uromyces vici fabae*)

लक्षण : पौधों पर हल्के से चमकदार पीले (हल्दी रंग के) फफोले नजर आते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर ज्यादा प्रकोप होता है। पत्तियाँ मुरझाकर गिर जाती हैं और अंततः पौधे सूख कर मर जाते हैं।



रतुआ / हरदा रोग

प्रबंधन :

(i) बुआई समय से (अक्टूबर के अंत या नवम्बर के मध्य तक) करने पर रतुआ के संक्रमण से बचाया जा सकता है।

(ii) मैन्कोजेव (0.2%) का 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

अरहर के हानिकारक कीट

1. पिच्छकी शलभ (Plume moth):

इस कीट का वैज्ञानिक नाम एक्सीलास्टिस ऐटोमोसा (*Exelastis atomosa*) है।

शलभ (पतंगा) आकार में छोटा तथा हल्का भूरा होता है। इसके अगले पंख में पिच्छकी होती हैं। इसका शिशु (सूंडी) हरा–भूरा रंग का होता है। शिशु ही फसल को हानि पहुँचाता है।

सूंडी फलियों को पहले छीलकर ऊपरी सतह पर से खाती है और फिर फलियों में छेद कर घुस जाती है तथा खाती रहती है।

प्रबंधन :

(i) प्रारम्भिक अवस्था की सूंडियों को पकड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) फसल पर 0.2% कार्बारिल का छिड़काव करना लाभकर होता है।

(iii) मिथाइल पाराथियॉन (फौलीडॉल) 2% धूल का भुरकाव करना चाहिए।



पिच्छकी शलभ

2. अरहर की फली मक्खी (Arhar pod fly):

इसका वैज्ञानिक नाम मेलैनग्रोमाइजा आब्ट्यूसा (*Melanagromyza obtusa*) है।

वयस्क मक्खी धात्विक हरे रंग की होती है। इसका आकार छोटा होता है। इसके मैगोट (शिशु) सफेद रंग के होते हैं। मैगोट ही फली को खाकर हानि पहुँचाती हैं। यह अरहर में अक्टुबर से अप्रैल तक, भिंडी में जुलाई से नवम्बर तक क्षति पहुँचाती है। मैगोट पौधे के तने में छेद करके प्रवेश कर उसे खाते हैं। फिर जब फली लगती है तब उसमें सुरंग बनाकर खाता है और मल भरता जाता है। बाद में जिस स्थान पर खाते हैं, वहाँ पर कवक एवं जीवाणु उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार ऐसे अरहर के दाने खाने



अरहर की फली मक्खी

योग्य नहीं रह पाते हैं।

प्रबंधन :

(i) प्रारम्भिक अवस्था में क्षतिग्रस्त फलियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) अत्यधिक प्रकोप होने पर क्वीनलफॉस 20 ई0 सी0 दवा 2 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

3. अरहर फली बग (Arhar pod bug):



अरहर फली बग

अरहर फली बग को चने की फली बग भी कहते हैं।

इस बग का वैज्ञानिक नाम क्लैविग्रैला गिबोसा (*Clavigralla gibbosa*) है।

प्रौढ़ बग 20 मि0 मी0 लंबा होता है। वे हल्के भूरे रंग के होते हैं। इसके जीवन काल में तीन अवस्थाएँ अंडा, निम्फ और वयस्क होते हैं। निम्फ (अर्भक) और वयस्क दोनों ही हानिकारक होते हैं। यह अरहर की फसल के तने, पत्तियों एवं फूलों की कलिकाओं से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं। जिसके फलस्वरूप फलियों पर फीके रंग के धब्बे उत्पन्न हो जाते हैं। जब आक्रमण अधिक होता है तो फलियाँ सिकुड़ जाती हैं और दाने बहुत ही छोटे रह जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) इमीडाक्लोप्रीड 17.8 एस0 एल0 दवा का 250 मि0 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए या मिथाइल पाराथियॉन (फॉलीडाल) 2% धूल का 20–25 कि0 ग्रा0 / हे0 की दर भुरकाव करना चाहिए।

4. चित्तीदार फली छेदक (Spotted pod borer):

इस कीट का वैज्ञानिक नाम मैरूका टेस्टुलेलिस (*Maruca testulalis*) है।

इस कीट का वयस्क पतंगा मौथ होता है। उसके अगले पंखों में दो सफेद धब्बे होते हैं और पंख के किनारे पर छोटे–छोटे काले धब्बे एवं धारी होती है। इसके पिछले पंख पीले सफेद रंग के होते हैं और किनारे पर लहरदार धब्बे फैले रहते हैं।

इस कीट के जीवन काल में चार अवस्थाएँ होती हैं। अंडा, लार्वा, प्यूपा एवं वयस्क। मादा वयस्क पत्तियों, फूलों एवं छोटी डालियों पर अंडे देती है। अंडों से सुंडियाँ निकलकर ऊपरी पत्तियों एवं फूलों को जाले से बाँध कर खुरचकर खाती है। यह हल्के पीले एवं हरे भूरे रंग की होती है। ये जाले के अंदर पत्ती एवं फलियों में प्यूपा बन जाती है या नीचे गिरी हुई पत्तियों में प्यूपा बन जाती है। प्यूपा हल्के पीले–हरे रंग का होता है जो कि अंडाकार कोकून के अंदर रहता है। प्यूपा से पतंगा (मौथ) एक सप्ताह में निकल आता है।

इस कीट की सूंडियाँ, पुष्पगुच्छ कली एवं पत्तियों को खाकर नष्ट कर देती हैं। इस कीट की सूंडियाँ जुलाई–अगस्त माह में ऊपर की कोमल पत्तियों को जाले मे बाँधकर ऊपर से खुरचकर खाती है। फिर जब पुष्पगुच्छ खिलते हैं तो उन्हें भी रेशमी जालों से बाँधकर खाती है। जब पौधे में फलियाँ लग जाती है तो फली के अंदर प्रवेश कर बीज को खाती है।



चित्तीदार फली छेदक

प्रबंधन :

(i) क्षतिग्रस्त पत्तियाँ को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) क्वीनलफॉस 20 ई0 सी0 दवा का 2 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

अरहर के रोग

1. उकठा रोग (Wilt):

रोग जनक : फ्यूजेरियम उडम (*Fusarium udum*)

लक्षण : रोग जनक पौधे की जड़ों में प्रवेश कर दारू उत्तक (जाइलम) को संक्रमित कर तने में ऊपर की ओर बढ़ते रहता है। संक्रमित पौधे पीले होकर सूखने लगते हैं। तना को बीच से चीरने पर भूरे या काले रंग की धारी दिखाई पड़ती है।

प्रबंधन :

(i) रोगी पौधों तथा फसल के अवशेषों को एकत्र कर नष्ट करना चाहिए।

(ii) ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करना चाहिए।

(iii) 1 ग्राम विटावैक्स / बैविस्टीन तथा 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर प्रति किलो बीज की दर से बीज उपचार करना चाहिए।

(iv) रोगरोधी प्रजाति लगाना चाहिए।



चकता रोग

2. **बांझ चितेरी रोग (Sterility mosaic) :**

रोग जनक : बांझ चितेरी विषाणु *(Sterility mosaic)*

संचरण : इरियोफिड माइट (कीट) द्वारा।

लक्षण : संक्रमित पौधों की पत्तियाँ छोटी, पतली तथा उनपर अनियमित आकार के हल्के एवं गहरे धब्बे या चित्तियाँ पड़ जाती है। रोगी पौधे छोटे रह जाते हैं तथा शाखाओं की संख्या स्वस्थ पौधों की तुलना में अधिक हो जाती है। फलस्वरूप पौधे झाड़ी जैसे प्रतीत होते हैं। रोगी पौधे में फूल व फलियाँ नहीं बनने के कारण इसे बांझ रोग कहा जाता है।



बांझ चितेरी रोग

प्रबंधन :

(i) रोगी पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iii) बीजों का फ्यूराडान 3जी द्वारा 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचार करना चाहिए।

(iv) फसल की आरंभिक अवस्था में कैल्थेन या मैटासिस्टोक्स (0.1%) का छिड़काव करना चाहिए।

मूँग एवं उड़द के हानिकारक कीट

1. कजरा कीट : गेहूँ के कजरा कीट की तरह।
2. चना का फली छेदक : चना का फली छेदक की तरह।
3. भूआ पिल्लू (Bihar Hairy Caterpillar) : यह बहुभक्षी कीट है।



भूआ पिल्लू

भूआ पिल्लू का वैज्ञानिक नाम स्पाइलोसोमा ऑब्लिक्वा *(Spilosoma obliqua)* है।

इसका पतंगा मध्यम आकार का हल्का भूरे रंग का पीलापन लिए होता है जो कि रात्रि में प्रकाश की ओर उड़ता हुआ दीख पड़ता है। इसके पंखों पर काले–काले धब्बे होते हैं। इसका वयस्क पतंगा हानिकारक नहीं होता है परन्तु यह अंडे देकर शिशु (लार्वा) द्वारा हानि पहुँचाता है। लार्वा हल्के हरे या पीलापन लिए हुए झुंडों में दिखाई पड़ती है। इसके शरीर पर छोटे–छोटे घने बाल होते हैं।

इस कीट की शिशु झुंडों में पत्तियों पर खाती है। ये पत्तियों को खाकर छलनी बना देता है और केवल शिराओं का जाल बच जाता है। जब इल्ली बड़ी हो जाती हैं तब ये तितर–बितर पत्तियों में छेद कर खाना शुरू करती हैं जिससे पूरी पत्ती भी समाप्त हो जाती है और केवल मध्य की मोटी शिरा बची रहती है। यह 70–80% तक फसल को हानि पहुँचाती हैं।

प्रबंधन :

(i) वयस्क कीट को प्रकाश–पाश (Light trap) में एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) यदि खेत छोटा है तो अंडों से युक्त पत्तियों कों तोड़कर नष्ट कर जला देना चाहिए।

(iii) डायक्लोरवॉस 100 ई0 सी0 दवा का 500 मि0 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।


पीली चितेरी रोग

मूँग एवं उड़द के रोग

1. पीली चितेरी रोग (Yellow mosaic disease) :

रोग जनक : पीली चितेरी विषाणु (Yellow mosaic Virus)

संचरण : सफेद मक्खी (कीट) द्वारा

लक्षण : पहले पत्तियों पर छोटे पीले धब्बे दिखाई पड़ते हैं। यह धब्बे एक साथ मिलकर तेजी से बड़े–बड़े धब्बे बनाते हैं और अंततः पत्तियाँ पूर्ण रूप से पीली हो जाती है।

प्रबंधन :

(i) खर–पतवार नियंत्रण करना चाहिए।

(ii) सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए मेटासिस्टाक्स (आक्सीडेमेटान मिथाइल) 0.1% का छिड़काव करना चाहिए।

2. पर्ण व्याकुंचन रोग / झुर्रीदार पत्ती रोग (Leaf Crinckle) :


पर्ण व्याकुंचन रोग

रोग जनक : पर्ण व्याकुंचन विषाणु (Leaf Crinckle Virus)

संचरण : माहू / सफेद मक्खी (संचरण अस्पष्ट)

लक्षण : पत्तियों में सामान्य से अधिक वृद्धि एवं झुरियाँ पड़ जाती है। पत्तियाँ सामान्य से अधिक मोटी तथा खुरदरी प्रतीत होती है।

प्रबंधन :

(i) संक्रमित पौधें को उखाड़ कर जला देना चाहिए।

(ii) कीटनाशी मेटासिस्टॉक्स (ऑक्सीडेमेटान मिथाइल) 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(iii) रोगरोधी प्रजाति को बोना चाहिए।

3. रूक्ष रोग (Anthracnose Disease) :


रूक्ष रोग

रोग जनक : कोलेटोट्राइकम लिन्डेमुथियेनम (*Colletotrichum lindemuthianum*)

लक्षण : पत्तियों एवं फलियों पर भूरे गोल धंसे हुए धब्बे पड़ जाते हैं। इन धब्बों का केन्द्र गहरे रंग का और बाहरी सतह चमकीली लाल रंग की हो जाती है। संक्रमण बढ़ने पर पौधे के रोग ग्रसित भाग जल्दी सूख जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) कैप्टान या थिराम कवकनाशी से 2–3 ग्राम / कि0ग्रा0 बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए।

(ii) जिनेब (इन्डोफिल जेड–78) कवकनाशी 2 ग्राम / लीटर पानी में घोलकर रोग के लक्षण दिखते ही छिड़काव करना चाहिए।

मसूर के हानिकारक कीट

चने के हानिकारक कीट की तरह


उकठा रोग

मसूर के रोग

1. उकठा रोग (Wilt) :

रोग जनक : फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम *(Fusarium Oxysporum)*

लक्षण : **पत्तियाँ पीली पड़ जाती है, पौधे सूख जाते हैं। तना को बीच से चीरने पर दारू ऊतक (Xylem) का रंग भूरा या काला दिखाई देता है।**

प्रबंधन :

(i) गर्मियों में गहरी जुताई करना चाहिए।

(ii) 4 ग्राम ट्राईकोडर्मा तथा 1 ग्राम वीटावैक्स / बैविस्टीन कवकनाशी द्वारा बीज उपचार करना चाहिए।

(iii) 5 टन प्रति हे0 गोबर की खाद खेत की तैयारी करते समय का प्रयोग करना चाहिए।

(iv) रोगरोधी प्रजाति बोना चाहिए।

2. स्तंभ मूल संधि गलन रोग (Collar rot) :


स्तंभ मूल संधि रोग

रोग जनक : स्कलेरोशियम रोल्फसाई *(Sclerotium rolfsii)*

लक्षण : पौधे की शैशव अवस्था में ही पत्तियाँ धीरे–धीरे पीली होकर मुरझा जाती है। पौधे के स्तंभ–मूल संधि क्षेत्र पतली हो जाती है एवं उसमें सफेद रंग की फफूँद का जाल दिखाई पड़ती है।

प्रबंधन :

(i) गर्मियों में गहरी जुताई करना चाहिए।

(ii) 4 ग्राम ट्राईकोडर्मा तथा 1 ग्राम वीटावैक्स / बैविस्टीन कवकनाशी द्वारा बीज उपचार करना चाहिए।

(iii) 5 टन प्रति हे0 गोबर की खाद खेत की तैयारी करते समय प्रयोग करना चाहिए।

(iv) रोगरोधी प्रजाति बोना चाहिए।

3. शुष्क जड़ गलन रोग (Dry root rot) :


शुष्क जड़ गलन रोग

रोग जनक : राइजोक्टोनिया बटाटीकोला *(Rhizoctonia bataticola)*

लक्षण : वातावरण का तापमान 30° सेन्टीग्रेड के आस–पास हो और मृदा में ननी की मात्रा कम हो तब यह रोग अधिक फैलता है। रोगी पौधों की पत्तियाँ तथा तने सूखे हुए भूसे की तरह की हो जाती है। रोग ग्रसित पौधों की जड़ें सूखकर आसानी से टूट जाती है।

प्रबंधन :

(i) गर्मियों में गहरी जुताई करना चाहिए।

(ii) 4 ग्राम ट्राईकोडर्मा तथा 1 ग्राम वीटावैक्स / बैविस्टीन कवकनाशी द्वारा बीज उपचार करना चाहिए।

(iii) 5 टन प्रति हे0 गोबर की खाद खेत की तैयारी करते समय डालना चाहिए।

(iv) रोगरोधी प्रजाति बोना चाहिए।

4. हरदा / रतुआ रोग (Rust) :



हरदा रोग

रोग जनक : यूरोमाइसिस विसी–फेवी *(Uromyces viciae-fabae)*

लक्षण : इस रोग के संक्रमण होने पर पहले पीले रंग इसके पश्चात् भूरे रंग और अंततः काले रंग के सूक्ष्म बिन्दु, पत्तियों, तनों तथा फलियो पर बनते हैं।

प्रबंधन :

(i) मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक बुआई करना चाहिए।

(ii) घुलनशील गंधक (0.3%) का छिड़काव करना चाहिए।

(iii) आवश्यकतानुसार मैंकोजेव (0.2%) का छिड़काव करना चाहिए।

तेलहनी फसलों के हानिकारक कीट

1. लाही या एफिड (Aphid) :



लाही

लाही कीट को माहू भी कहा जाता है। इसका वैज्ञानिक नाम लिपाफिस एरिसिमी *(Lipaphis erysimi)* है।

लाही आकार में 2 मि0 मी0 लंबे तथा गोलाकार हरे काले रंग के होते हैं। इन कीट के मुखांग चुभाने एवं चुसने वाले होते हैं। यह दिसम्बर से फरवरी तक सरसों तथा क्रुसीफेरी कुल के पौधों पर आक्रमण करता है।

इस कीट के जीवन–चक्र में दो अवस्थाएँ होती हैं ; निम्फ (अर्भक) एवं वयस्क। मादा सीधे निम्फ (Nymph) को जन्म देती है। इस क्रिया को अभिषेक जनन (Parthenogeneris) कहते हैं। बिना अंडे दिये बच्चों को जन्म की क्रिया को सजीव प्रजनन (Viviparous) कहते हैं। ये 7 दिनों में वयस्क हो जाते हैं। बाद में मादाओं के पंख आ जाते हैं। एक ही मौसम में इस कीट की 16 पीढ़ियाँ तक पाई जाती हैं।

एफिड़ अधिकतर एक स्थान से दूसरे स्थान पर उस समय पहुँचते हैं जब ठंडी हवा फुहार के रूप में बहती है। गर्मी के मौसम में इस कीट की सक्रियता लगभग समाप्त हो जाती है।

इस कीट के निम्फ एवं वयस्क फसल की पत्तियों, तने, फूलों एवं फलियाँ का रस चुसती है। इस कीट के प्रकोप से पौधे बदरंग और कमजोर हो जाते हैं तथा उनमें फल नहीं आ पाते हैं। ये एक प्रकार का द्रव छोड़ते हैं जिसे मधु बिन्दु (Honey dew) कहते हैं। इनसे पत्तियों पर फफूँद पैदा हो जाती है। जिसके परिणामस्वरूप पत्तियों मे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बिल्कुल रूक जाती है। इस कीट द्वारा फसल को पहुँचाई गई क्षति की मात्रा 15–50% तक आँकी गई है।

प्रबंधन :

(i) फसल की अगात बुआई करने से इस कीट के प्रकोप से बचाव किया जाता है।

(ii) नीम बीज चूर्ण 5% या इमीडाक्लोप्रीड 17.8 एस0 एल0 दवा का 250 मि0 ली0 / हे0 या डायमेथोएट 30 ई0 सी0 का 1 ली0 / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

(iii) इसके परजीवी कीट काक्सीनेला सेप्टमपंक्टेटा (*Coccinella Septempunctata*), क्राइसोपा (*Chrysopa* sp) तथा सिरफिड मक्खी (Syrphid fly) के मैगट हैं जो इसकी संख्या को कम करते हैं।

2. सरसों की आरा मक्खी (Mustard sawfly) :



आरा मक्खी शिशु

इस कीट का वैज्ञानिक नाम एथालिया ल्यूगेन्स (*Athalia lugens*) है।

वयस्क कीट नारंगी–पीला रंग के होते हैं तथा पंखो का रंग गहरा लाल–भूरा होता है। शिशु (ग्रब) कीट हरे रंग का होता है जो बाद में गहरे रंग का होता है।

इस कीट का प्रकोप अक्टुबर से दिसम्बर तक रहता है। मादा मक्खी अपने आरीदार अंड निक्षेपक (Ovipositor) से पत्तियों में छेद बना अंडे देती है।

इस कीट की हानिकारक अवस्था केवल Grub हैं। इस अवस्था में यह पत्तियों में छेद कर खाता है। ये कभी–कभी प्ररोह की पूरी बाह्यत्वचा भी खा जाते हैं। इस प्रकार बढ़े हुए पौधों पर प्रकोप से उनमें फल नहीं आते हैं।

प्रबंधन :

(i) बुआई के 3–4 सप्ताह बाद सिंचाई कर देना चाहिए।

(ii) मिथाइल पाराथियॉन (फोलीडाल) 2% धूल का भुरकाव या क्वीनलफॉस 25ई0 सी0 का 2 लीटर/हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

3. हीरक पृष्ठ पतंगा (Diamond back moth):

इस कीट का वैज्ञानिक नाम प्लूटेला जाइलोस्टेला (*Plutella xyllostella*) है।

इस कीट का शलभ (पतंगा) आकार में छोटा है। इसकी पीठ पर हीरे जैसा मालूम होता है। इसलिए इस कीट को हीरक पृष्ठ पतंगा कहते हैं। प्रत्येक पंख के पिछले किनारे पर तीन त्रिभुजाकार हल्के पीले रंग के चिह्न होते हैं।

इस कीट के जीवन–काल में चार अवस्थाएँ होती हैं जिसमें शिशु (लार्वा) ही हानि पहुँचाते हैं। छोटी शिशु पहले पत्ती को खुरचाती है फिर उनमें नाली बनाकर खाती है। इस कीट की इल्ली बहुत ही हानिकारक होती है। यह पत्तियों में छेद बनाती है। पत्तागोभी में छेदकर घुसकर खाती है।



आक्रांत पौधे

प्रबंधन :

(i) छेद बनी हुई पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) 2% फोलीडॉल धुल को 10–12 कि0 ग्रा0/हेक्टर की दर से भुरकाव से भी इस कीट से होने वाली क्षति को रोका जा सकता है।

4. पातगोभी तितली (Cabbage butterfly):

इस कीट का वैज्ञानिक नाम पियरिस ब्रैसिकी (*Pieris brassicae*) है।

यह आकार में छोटी तथा सफेद रंग की तितली होती है। इसके अगले पंखों के ऊपरी किनारे पर काले रंग के धब्बे होते हैं तथा पिछले पंख की शिराओं के किनारे पर काले धब्बे होते हैं। मादा तितली 6.5 से0 मी0 पंख फैलाकर लंबी होती है।

फसल को इल्लियाँ ही हानि पहुँचाते हैं। इल्लियाँ पत्तियों, तनों व फूलों को खाती हैं। पत्तियों में छेद हो जाते हैं और उनकी बढ़वार रूक जाती है।



इल्लियाँ (लार्वा) आक्रांत पौधे

प्रबंधन :

(i) शुरू की अवस्था में जब प्रकोप कम हो तो हाथ से शिशुओं को चुनकर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) मालाथिआन 50 ई0 सी0 दवा का 1 ली0/हे0 दर से छिड़काव करना चाहिए।

5. सफेद भृंगक (White Grub):

इसका वैज्ञानिक नाम होलोट्राइकिया कान्सैंगुइनिया (*Holotrichia consanguinea*) है।

प्रौढ़ भृंग लगभग 18 मि0 मी0 लम्बा होता है तथा 7 मि0 मी0 चौड़ा होता है इसका रंग हल्का भूरा होता है। इस कीट का शिशु (ग्रब) सफेद रंग का अंग्रेजी के 'सी' आकार का मुड़ा होता है।

मादा भृंग अंडे भूमि में लगभग 10 सें0 मी0 की गहराई में देती है। इन अंडों से भृंगक निकलते हैं और 8–10 सप्ताह में पूर्ण विकसित होता है। भृंगक ही पौधों की जड़ों को खाकर हानि पहुँचाते हैं जब बरसात समाप्त हो जाता है तो यही भृंगक भुमि में नीचे चले जाते हैं और वही प्यूपा में बदल जाते हैं। लगभग दो सप्ताह में प्यूपा से प्रौढ़ निकलता है जो भूमि में 10–12 से0 मी0 नीचे तक रहता है। नवम्बर महीने में यह बाहर निकलता है फिर अगले जून के महीने तक भूमि में रहते हैं। इस कीट की संख्या बरसात के महीने में अधिक होती है और इस प्रकार इस कीट की वर्ष भर में एक ही पीढ़ी पाई जाती है।

इस कीट का ग्रब (शिशु) जड़ों को खाता हैं जिसके फलस्वरूप संपूर्ण पौधा सूख जाता है और मर जाता है। यह मूँगफली फसल का बहुत बड़ा शत्रु होता है।

प्रबंधन :

मूँगफली बोते समय ही थीमेट दानेदार दवा का 10–12 कि0 ग्रा0 प्रति हेक्टर की दर से भूमि में मिलाना चाहिए। इन्हें रोशनी पर एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए।

सरसो, राई एवं तोरी (Rape seed and mustard)

1. अल्टरनेरिया अंगमारी रोग (Alternaria blight) :

रोग जनक : अल्टरनेरिया ब्रैसिकी *(Alternaria brassicae)*

लक्षण : पहले पत्तियों पर भूरे रंग के गोल चित्ती (धब्बा) बनते हैं बाद में पौधे के दूसरे भागों तथा फलियों पर भी काले चित्ती (धब्बे) बन जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) थीरम दो ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) इंडोफिल एम–45 का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

2. सफेद हरदा रोग (White rust) :

रोग जनक : अलबूगो कैन्डिडा *(Aibugo candida)*

लक्षण : जड़ को छोड़कर पौधे के हर आक्रांत भाग पर फफोले (Pustules) एवं सफेद चूर्णी दिखाई पड़ते हैं।

प्रबंधन :

(i) थीरम दो ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) रिडोमिल एम० जेड० 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

सूरजमूखी के हानिकारक कीट

1. फल छेदक (Fruit borer) : इस कीट का वैज्ञानिक नाम हेलिकोवरपा आर्मिजेरा (*Helicoverpa armigera*) है।

इस कीट का पहचान के लिए "चने के हानिकारक कीट" नामक अध्याय में दिया जा चुका है।

इस कीट की हानिकारक अवस्था इल्लियाँ (शिशु) है जो कि फूलों एवं फलों को खाती है। सूरजमुखी में तो कभी– कभी यह बीज का पूरा शीर्ष ही खा जाती है। इस तरह पौधों पर बीज नहीं बन पाते।

रोकथाम के उपाय : चने का फली छेदक कीट की तरह।

सूरजमूखी पर मधुमक्खियाँ मँडराते आपने देखा होगा, परन्तु यह हानिकारक कीट नहीं है, यह मित्र कीट हैं। ये हमारे फसलों को पर–परागण की क्रिया द्वारा 20–25 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि करती हैं।

2. कटुंआ पिल्लु (Cutworm) :

इस कीट का वैज्ञानिक नाम (*Agrotis ypsilon*) है। इसका वर्णन "चने के हानिकारक कीट" अध्याय में किया जा चुका है।

3. भुआ पिल्लु (*Bihar hairy caterpillar*) : भूआ पिल्लु का वैज्ञानिक नाम स्पाइलोसोमा ऑबलिक्वा (*Spilosoma obliqua*) है।

इसका वर्णन "उड़द के हानिकारक कीट" अध्याय में किया जा चुका है।

सूर्यमुखी (Sun flower) के रोग

1. पत्र लांक्षण रोग (Leaf spot) :

रोग जनक : अल्टरनेरिया हेलियेन्थी (*Alternaria helianthi*)

लक्षण : पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं।

प्रबंधन : डायथेन एम० 45 (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

2. हरदा रोग (Rust):

रोग जनक : पकसिनिया हेलियेंथी *(Puccinia helianthi)*

लक्षण : पत्तियों पर भूरे एवं लाल रंग के छोटे–छोटे धब्बे दिखाई पड़ते हैं।

प्रबंधन : डायथेन एम० 45 (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

गन्ना के हानिकारक कीट

1. शीर्ष छेदक (Top borer):



शीर्ष छेदक

इस कीट का वैज्ञानिक नाम ट्राइपोराइजा निवेला *(Tryporiyza nivella)* है।

इस कीट के नर एवं मादा पतंगे (वयस्क) उजले होते हैं और मादा के उदर के अंतिम भाग पर नारंगी रंग के गुच्छेदार रोये होते हैं। इसके पिल्लू (इल्ली) मटमैला सफेद रंग का होता है तथा अंडों का समूह पीले रंग के छत्रों से ढका रहता है।

इस कीट के आक्रमण से पौधों की बाढ़ रूक जाती है और पौधों के बगल से शाखाएँ निकल आती हैं और बीच की पत्ती ईट के रंग की तरह हो जाती है। इन पत्तियों में छोटे–छोटे पिल्लू दिखाई पड़ते हैं।

प्रबंधन :

(i) कटनी के बाद मार्च में खूँटी जमीन से 2–3 से मी० ऊपर भाग से पत्तियों आदि को हटा देना चाहिए। खेत में बचे पत्तियों के अवशेष को जला देना चाहिए ताकि उनमें छिपे कीट नष्ट हो जायें।

(ii) प्रकाश प्रपंच (Light Trap) का प्रयोग करना चाहिए।

(iii) जून की अंतिम सप्ताह या जुलाई के प्रथम सप्ताह में गन्ने के पौधों में आधार भाग में थीमेट 10 जी दवा का 10 कि० ग्रा० प्रति हेक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए। दानेदार कीटनाशी के व्यवहार करने के बाद पौधों के चारों ओर हल्की मिट्टी चढ़ा कर सिचाई करना चाहिए।

2. पायरिला (Pyrilla):



पायरिला

पायरिला का वैज्ञानिक नाम पायरिला पर्पूसिला *(Pyrilla perpusilla)* हैं।

वयस्क का रंग गन्ने की सूखी पत्तियों जैसा होता है। सिर के आगे एक नोकदार नाक निकली होती है जिसे प्रौथ (Snout) कहते हैं। सिर एवं वक्ष सटा होता है। वक्ष पर दो जोड़ी पंख होते हैं।

पायरिला कीट से आक्रांत गन्ने फसल के खेत में घुसने पर कीड़ों के फुदकने की फड़फड़ाहट सुनाई पड़ती है। यह फुदकने वाला कीड़ा है जिसके शिशु (निम्फ) और वयस्क पत्तियों के निचले तल से रस चूसते हैं जिससे पत्तियाँ पिल्ली पड़ जाती हैं और बाद में काला फफूँद लग जाने से झुलसी हुई नजर आती है। जुलाई से अक्टुबर तक इसका आक्रमण होता है।

प्रबंधन :

(i) जिन पत्तियों पर अंडे हो उनको तोड़कर जला देना चाहिए।

(ii) इमीडाक्लोप्रीड 250 मि० ली० 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

ईख या गन्ना (Sugarcane) के रोग

1. लाल सड़न रोग (Red rot):

रोग जनक : कोलेटोट्राइकम फाल्केटम *(Colletotrichum falcatum)*

लक्षण : रोग ग्रस्त पौधे के पत्तियाँ पीली होकर मुरझा जाती है।

पत्तियों का मध्य शिरा लाल रंग की हो जाती है तथा तना को चीरने पर भीतर का भाग लाल दिखाई पड़ता है। रोग ग्रस्त तना से दुर्गन्ध भी आती है।

प्रबंधन :

(i) स्वस्थ पौधों के पोरियाँ (Setts) लगाना चाहिए।

(ii) एग्रोसान जी०एन० से पोरियों (Setts) का उपचार करना चाहिए।

(iii) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iv) रोगरोधी प्रजाति लगाना चाहिए।

2. कंडवा रोग (Smut):

रोग जनक : अस्टिलागो सिटेमिनी *(Ustilago scitaminea)*

लक्षण : बीच की पत्तियों में से एक लंबी कोड़े के समान डंडी (Whip) निकलती है। डंडी के फटने पर काले कंड के बीजाणु का चूर्ण बाहर निकलने लगती है।

प्रबंधन :

(i) स्वस्थ पोरियो का चुनाव करना चाहिए।

(ii) पोरियों (Setts) का एग्रोसान जी०एन० से उपचार करना चाहिए।

(iii) दीर्घकालीन फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iv) रोग रोधी किस्म लगाना चाहिए।

सब्जियाँ के हानिकारक कीट

आलू के कीट

1. आलू का पतंगा (Potato Tuber moth):

इस कीट का वैज्ञानिक नाम थोरिमिया ओपरकुलेला (*Phthorimea operaculella*) है।

पतंगा के अगले पंखों पर भूरे या काले रंग की पट्टियाँ होती हैं। इसके पूरे शरीर पर छोटे–2 सफेद धब्बे होते हैं। पिछले पंख सफेद एवं झालरदार होते है। इसका सिर गहरे भूरे रंग का होता है।



आलू का पतंगा

आलू और भंडारित आलू के अलावा यह टमाटर, बैंगन एवं खरपतवारों पर तना छेदक के रूप में रहता है। इस कीट के जीवन–काल में चार अवस्थाएँ होती हैं, अंडा, इल्ली (लार्वा), प्यूपा एवं वयस्क जिसमें केवल इल्लियाँ ही आलू की पत्तियों तथा आलू को क्षति पहुँचाते हैं। इल्लियाँ पत्तियों में सुरंग बनाकर कोशिकाओं को खा जाती हैं जिससे पत्तियों में चित्तियाँ पड़ जाती है। यह तने में छेद करके उसमें सुरंग बनाती है। फलतः पौधे मुरझाकर सूख जाते हैं। खेत में इल्ली बाहर निकाले हुए आलू में सुरंग बनाती है जिससे जीवाणुओं का प्रकोप हो जाता है और आलू सड़ने लगते हैं। गोदामों में रखे आलू में भी यह कीट क्षति पहुँचाते हैं।

प्रबंधन :

(i) सोलेनेसी कुल के खरपतवारों को जला देना चाहिए।

(ii) ग्रसित पत्तियों को तोड़कर इल्लियों को नष्ट कर देना चाहिए।

(iii) आलू को खोदने के बाद रात के समय खुला हुआ खेत में नहीं छोड़ना चाहिए। इन्हें तिरपाल से अच्छी तरह ढक देना चाहिए ताकि मादा पतंगा इन आलू पर अंडे नहीं दे सके।

(iv) ग्रसित पौधों पर 2 प्रतिशत फॉलीडाल धूल या 5 प्रतिशत मालाथिऑन धूल 2.5 कि0 ग्रा0 प्रति हेक्टर की दर से भुरकाव करना चाहिए।

(v) आलू का भंडारण शीतघरों में ही करना चाहिए। यदि साधारण भंडारण करना हो तो आलू के ऊपर व नीचे बालू की 2.5 से0 मी0 से 5 से0 मी0 मोटी तह बिछा देनी चाहिए।

आलू के रोग

1. पिछात झुलसा रोग (Late Blight of Potato):



पिछात झुलसा रोग

रोग जनक : फाइटोफ्थोरा इन्फेसटान्स (*Phytopthora infestans*):

लक्षण : जब वातावरण का न्यूनतम तापमान 10° से० एवं सापेक्ष आर्द्रता (नमी) 90 प्रतिशत के करीब हो। दो–तीन दिनों तक आकाश में बादल छाये रहे एवं रूक रूककर बारिश हो तो इस रोग का प्रकोप काफी बढ़ जाता है। पौधे के सभी भागों यथा, पत्तियों, डंठलों तथा तनों पर काले/भूरे धब्बे बनते हैं। पत्तियों पर काले रंग के जलधारित धब्बे (Water Soaked Spot) बनते हैं। पत्तियों की नीचली सतह पर उजले रंग के रूई की भांति फफूंद का जाल दिखता है। उग्रावस्था में आलू से दुर्गन्ध भी निकलने लगती है।

प्रबंधन :

(i) स्वस्थ कंद को लगाना चाहिए।

(ii) कंद को पारायुक्त कवकनाशी जैसे एगालोल (0.5 प्रतिशत) से 10 मिनट तक (डुबाकर) उपचार कर लगाना चाहिए।

(iii) खड़ी फसल में मैंकोजेव 75 प्रतिशत 2 किलोग्राम या रिडोमिल एम०जेड० 2 किलोग्राम 700–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकतानुसार 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए।

2. अगात झुलसा रोग (Early Blight):



अगात झुलसा रोग

रोग जनक : अल्टरनेरिया सोलेनाई (*Alternaria solani*)

लक्षण : यह रोग मृदाजनित एवं वायुजनित होता है। आलू के बुआई के एक माह बाद जब तापमान 20–25° से० होता है, इस रोग के लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। पत्तियों की सतह पर गहरे भूरे धब्बे बनते हैं। धब्बों के बीच वलय (Ring) दिखाई पड़ते हैं। आलू के कंद को काटने पर कार्क जैसा दिखता है।

प्रबंधन :

(i) स्वस्थ कंद को लगाना चाहिए।

(ii) कंद को पारायुक्त कवकनाशी जैसे एगालोल (0.5 प्रतिशत) से 10 मिनट तक उपचार कर लगाना चाहिए।

(iii) खड़ी फसल में मैंकोजेव 75 प्रतिशत 2 किलोग्राम या रिडोमिल एम०जेड० 2 किलोग्राम 700–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर आवश्यकतानुसार 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए।

3. पर्ण कुंचन रोग (Leaf Roll):

रोग जनक : पर्ण कुंचन विषाणु (*Leaf Roll Virus*)

संक्रमण : लाही (Aphid) द्वारा।

लक्षण : रोग का आक्रमण प्रायः जनवरी–फरवरी में अधिक होता है। आक्रांत पत्तियाँ हल्की पीली एवं मुड़ जाती है। मुड़ी हुई पत्तियाँ भंगूर हो जाती हैं।



पर्ण कुंचन रोग

प्रबंधन :

(i) प्रमाणित बीज लगाना चाहिए।

(ii) आक्रांत पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(iii) लाही के प्रकोप से बचने के लिए जनवरी माह के प्रथम सप्ताह में आलू के लत्तर को काट देना चाहिए।

(iv) यह रोग लाही द्वारा फैलता है, इसके नियंत्रण के लिए मिथाइल डेमोटॉन 20 प्रतिशत ई०सी० (मेटासिस्टॉक्स) 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

प्याज तथा लहसुन के कीट

1. प्याज का थ्रीप्स (Onion thrips):

थ्रीप्स का वैज्ञानिक नाम थ्रिप्स टैबेकाई (*Thrips tabaci*) है।

यह 1 से0 12 मि0 मी0 लम्बा तथा बहुत ही कोमल कीट है। इसका रंग पीला होता है। इसके निम्फ पंखहीन होते है जबकि वयस्क कीट में झालरदार पंख होते हैं। ये पौधों की पत्तियों के कक्ष (Axil) में काफी संख्या में इकट्ठे रहते हैं।

यह कीट आलू, तम्बाकू, टमाटर, मिर्च फसल को भी क्षति पहुँचाते हैं।



थ्रीप्स से ग्रसित पत्तियाँ

थ्रिप्स से ग्रसित पत्तियाँ

इस कीट के जीवन–काल में तीन अवस्थाएँ होती हैं, अंडा, निम्फ और वयस्क। वयस्क एवं निम्फ दोनों ही प्याज और लहुसुन की पत्तियों को खुरच कर रस चूसते हैं। क्षतिग्रस्त पत्तियाँ चमकीली सफेद दिखती है जो बाद में ऐंठ कर मुंड़ और सूख जाती है। ऐसे पौधों के शल्ककंद छोटे रह जाते और उपज में भारी कमी आ जाती है।

प्रबंधन :

(i) प्याज व लहसुन की कीट–प्रतिराधी किस्मों को लगाना चाहिए। प्याज की सफेद किस्म कीट के लिए अपेक्षाकृत प्रतिरोधी है।

(ii) मालाथिआन 50 ई0 सी0 दवा का 2 लीटर प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

प्याज तथा लहसुन के रोग

1. बैंगनी धब्बा रोग (Purple Blotch):

रोग जनक : अल्टरनेरिया पोराई (*Alternaria porri*)

लक्षण : सबसे पहले पत्तियों के ऊपर बैंगनी रंग के उजले किनारे लिए हुए धब्बे बनते हैं। आक्रांत पत्तियाँ झुलसकर गिर जाती हैं।



बैंगनी धब्बा रोग

प्रबंधन :

(i) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(ii) बीज उपचार चाहिए।

(iii) रोगरोधी किस्म लगाना चाहिए।

(iv) मैंकोजेव 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

2. मृदु रोमिल रोग (Downy Mildew):



मृदु रोमिल रोग

रोग जनक : पेरोनोस्पोरा डिस्ट्रक्टर (*Peronospora destructor*)

लक्षण :

(i) यह कम तापमान तथा अधिक आर्द्रता के कारण होता है। संक्रमित पत्तियों पर कत्थई रंग के धब्बे बनते हैं। पत्तियाँ पीली होकर मुरझा जाती हैं।

(ii) संक्रमित अंकुरित बिचड़े टेढ़े–मेढ़े एवं विकृत हो जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) स्वस्थ वल्ब का प्रयोग करना चाहिए।

(ii) खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए।

(iii) उचित जल प्रबंधन की व्यवस्था करना चाहिए।

(iv) मैंकोजेव 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।



फल छेदक से आक्रांत पौधे

बैंगन के कीट

1. बैंगन का तना एवं फल छेदक (Brinjal shoot and fruit borer):

इस कीट का वैज्ञानिक नाम ल्यूसिनोडस आर्बोनेलिस (*Leucinodes orbonalis*) है।

वयस्क कीट मध्यम आकार का पतंगा है। उसके पंख सफेद होते हैं जिनपर कई भूरे धब्बे होते हैं। इसका सूंडी हल्की पीली जिसके शरीर पर गुलाबी रंग की धारियाँ होती हैं।

बैंगन के अलावा टमाटर, आलू तथा सोलेनेसी कुल के अन्य पौधे इसके परपोषी हैं। इसके जीवन–चक्र में चार अवस्थाएँ होती हैं, अंडा, लार्वा, प्यूपा एवं वयस्क।

इस कीट की लार्वा कोमल तना (Shoot), फूल के बाह्यदलपुंज एवं छोटे–2 फलों में प्रवेश कर जाती है और अंदर ही अंदर खाती रहती है। कोमल कीट ग्रस्त प्ररोह मुरझाकर लटक जाते हैं और बाद में सूख जाते हैं। छोटे पौधों में प्रकोप होने पर प्रायः पौधा मर जाता है। बड़ी अवस्था में प्रकोप होने पर नई शाखाएँ मर जाती हैं और पौधे की वृद्धि पर कुप्रभाव पड़ता है तथा फूल और फल कम लगते हैं। जिन फलों में इल्लियाँ (लार्वा) प्रवेश कर जाती हैं, उनका गुदा खराब हो जाता है। फल प्रायः टेढ़े–मेढ़े हो जाते हैं और खाने योग्य नहीं रहते।

प्रबंधन :

(i) खेत में मुरझाए हुए तना एवं क्षतिग्रस्त फलों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) फेरोमोन ट्रेप का प्रयोग 10 ट्रैप प्रति हेक्टर की दर से खेतों में लगाना चाहिए।

(iii) कीट के आक्रमण की अधिकता में इमीडाक्लोप्रीड 17.8 एस0 एल0 का 250 मि0 ली0 या क्वीनलफॉस 25 ई0 सी0 का 1 ली0 या स्पाइनोसैड का 200 मि0 ली0 प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

लाल मकड़ी माइट (Red spider mite)

इसे सब्जी की मकड़ी–माइट या दो धब्बे वाली मकड़ी–माइट भी कहा जाता है।इसके शरीर पर दो बड़े रंगीन धब्बे होते हैं।

इसके निम्फ और वयस्क दोनों ही सूक्ष्म होते हैं। चूँकि ये माइट चमकीले लाल रंग के होते हैं, अतः इन्हें लाल मकड़ी माइट भी कहते हैं। ये माइट पत्तियों की निचली सतह पर जाला बनाकर रहती हैं।

यें पत्तियों की कोशिकाओं से रस चूसते हैं जिससे धीरे–धीरे पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं और अंत में सूख जाती हैं। पत्तियों पर बना हुआ जाला पौधे की वृद्धि में बाधक होता है। क्षतिग्रस्त पौधों पर फल अपेक्षाकृत कम रहता है।

प्रबंधन :

गंधक की बारीक धूल 20 कि0 ग्रा0 प्रति हेक्टर की दर से भुरकाव करना चाहिए या डाइमेथोएट 30 ई0 सी0 का 1 लीटर या मालथियान 50 ई0 सी0 का 1 लीटर प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

बैंगन के रोग

1. आर्द्र गलन रोग (Damping Off):

रोग जनक : पीथियम एफेनिडरमेटम (*Pythium aphenidermatum*) रोगलक्षण : यह रोग बैंगन के अलावा अन्य सब्जियों, यथा, टमाटर, मिर्च, फूलगोभी, पत्तागोभी आदि पौधे के नर्सरी में ज्यादा लगते हैं। गर्म तथा अधिक नमी के कारण इसका प्रकोप बढ़ जाता है। आरंभिक अवस्था में पौधे जमीन पर गिरकर सूख जाते हैं।


आर्द्र गलन रोग

प्रबंधन :

(i) नर्सरी में समुचित जल प्रबंधन की व्यवस्था करनी चाहिए।

(ii) एक ग्राम बैविस्टीन तथा चार ग्राम ट्राईकोडर्मा भिरीडी द्वारा बीज उपचार कर लगाना चाहिए।

(iii) मैंकोजेव (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

2. फल गलन रोग (Fruit Rot):

रोग जनक : फोमोप्सिस भेक्जेन्स (*Phompsis vexans*)

लक्षण : पहले पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के गोल या अंडाकार धब्बे दिखाई पड़ते हैं। फलों पर काले रंग के जलधारित धब्बे बनते हैं। फल मुलायम, विकृत एवं सड़ जाते हैं।


फल गलन रोग

प्रबंधन :

(i) बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) रोग के लक्षण दिखते ही कार्बेन्डाजिम एवं मैंकोजेव की मिश्रित कवकनाशी 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए।

3. छोटी पत्ती रोग (Little leaf of Brinjal):

रोग जनक : माइकोप्लाज्मा (*Mycoplasma*)

संक्रमण : जेसिड (Jassid) कीट द्वारा।

लक्षण : पत्तियाँ छोटी–छोटी एवं पौधे झाड़ीदार हो जाते हैं।


छोटी पत्ती रोग

प्रबंधन :

(i) रोग ग्रस्त पौधों को नष्ट करना चाहिए।

(ii) रोग वाहक कीट को नियंत्रण के लिए कीटनाशी मिथाईल डेमोटॉन (मेटासिस्टॉक्स 25 ई०सी०) या डाइमेथोएट 30 ई०सी० (रोगर) 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से 15 दिनों के अंतराल पर 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

(iii) टेट्रासाइक्लीन दवा आवश्यकतानुसार 10 से 50 मि.ग्रा. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

टमाटर के कीट

1. टमाटर का फल छेदक (Tomato fruit borer):

इस कीट का वैज्ञानिक नाम हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा (*Helicoverpa armigera*) है।

इस कीट की इल्लियाँ टमाटर के कच्चे तथा पके फलों में छेद करके अंदर का गुदा खा जाती हैं। जहाँ पर इस कीट का प्रकोप होता है, वहाँ 50 प्रतिशत तक फल क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

इसके पहचान एवं नियंत्रण चना का फली छेदक अध्याय में दिया जा चुका है।



फल छेदक से ग्रसित टमाटर

टमाटर के रोग

1. आर्द्र गलन रोग (Damping Off):

रोग जनक : पीथियम स्पेस्जीज *(Pythium spp.)*

लक्षण : आरंभिक अवस्था में ही पौधे जमीन पर गिरकर मर जाते हैं।



आर्द्र गलन रोग

प्रबंधन :

(i) बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iii) उचित जल प्रबंधन करना चाहिए।

(iv) मैंकोजेव (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

2. फल गलन रोग (Fruit Rot):

रोग जनक : फाइटोफ्थोरा पारासिटिका (*Phytophthora parasitica*)

लक्षण : फलों पर बादामी रंग के धब्बे बनते हैं। जमीन से सटे फल ज्यादा आक्रांत होकर सड़ने लगते हैं।



फल गलन रोग

प्रबंधन :

(i) गर्मी में गहरी जुताई करनी चाहिए।

(ii) सड़े हुए फल को नष्ट करना चाहिए।

(iii) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iv) कार्बेन्डाजीम और मैंकोजेव मिश्रित दवा 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(v) नीम आधारित दवाएं 3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

3. पर्णकुंचन रोग (Leaf Curl):

रोग जनक : पर्ण कुंचन विषाणु (Leaf Curl Virus)

संक्रमण : सफेद मक्खी (White fly) द्वारा।

लक्षण : पत्तियाँ अंदर की ओर मुड़कर भंगुराई हुई दिखाई पड़ती है।



पर्णकुंचन रोग

प्रबंधन :

(i) आक्रांत पौधों को नष्ट करना चाहिए।

(ii) कीटनाशी मिथाईल डेमोटॉन (मेटासिस्टॉक्स) 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

4. जड़ ग्रंथि रोग (Root Knot Disease) :



जड़ ग्रंथि रोग

रोग जनक : सूत्रकृमि मेलाइडोगाइनी इनकोगनिटा (*Meloidogyne incognita*)

लक्षण : यह रोग सब्जी के फसलों जैसे– टनाटर, बैंगन, भिंडी, मिर्च, कद्दू वर्गीय, मूली, गाजर आदि को आक्रांत करते हैं। इस रोग से जड़ों पर गोल एवं लंबी ग्रंथियां बनती हैं। पत्तियाँ पीली होकर मुरझा जाती हैं। पौधे का विकास रूक जाता है और पौधे सूखने लगते हैं।

प्रबंधन :

(i) ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करना चाहिए।

(ii) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iii) खेत की तैयारी के समय कार्बोफ्यूरॉन 3 जी (फूराडॉन) 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

(iv) सब्जियों के साथ गेंदा (Marigold) लगाना चाहिए।

गोभी वर्गीय सब्जियों के कीट

1. पत्तागोभी की तितली : इसका वर्णन "तेलहनी फसलों के हानिकारक कीट" अध्याय में किया जा चुका है।
2. हरीक पृष्ट पतंगा : इसका वर्णन "तेलहनी फसलों के हानिकारक कीट" अध्याय में किया जा चुका है।

गोभी वर्गीय सब्जियों के रोग

1. मुद्गर मूल रोग (Club root) :



मुदगर मूल रोग

रोग जनक : प्लाज्मोडियोफोरा ब्रेसिकाई (*Plasmodiophora brassicae*)

लक्षण : आक्रांत पौधों की जड़ों में मुदगर (Club) बनते हैं। जड़ों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। आक्रांत जड़ सड़ने लगते हैं एवं उससें दुर्गंध आने लगती है।

प्रबंधन :

(i) बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) उ ा जल प्रबंध करना चाहिए।

(iii) खेत की तैयारी करते समय सड़ी हुई गोबर की खाद 5 टन प्रति हेक्टेयर का प्रयोग करना चाहिए।

(iv) बैविस्टीन 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर मिट्टी में ड्रेंचिंग करना चाहिए।

2. मृदुरोमिल आसिता रोग (Downy mildew) :



मृदुरोमिल आसिता रोग

रोग जनक : पेरोनोस्पोरा पैरासिटीका (*Peronospora parasitica*)

लक्षण : पत्तियो की निचली सतह पर कपास की तरह सफेद, मटमैले रंग के फफूँद के जाल दिखाई पड़ते हैं।

प्रबंधन :

(i) बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) रोग के लक्षण दिखाई देने पर 3 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

3. श्याम विगलन रोग (Black rot)



श्याम विगलन रोग

रोग जनक : जैन्थोमोनास कम्पेस्टरिस *(Xanthomonas compestris)*

लक्षण : सबसे पहले पत्तियों पर काले बनते हैं जो मध्य शिरा तक 'भी' आकार (V-shaped) बनाता है। पत्तियों की शिराएँ काले रंग की हो जाती है। आक्रांत पौधे सड़कर मर जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) आक़ांत भागों को काटकर जला देना चाहिए।

(ii) स्वस्थ बीज लगाना चाहिए।

(iii) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iv) खड़ी फसल पर ताम्रकवकनाशी (ब्लाईटॉक्स–50) 2.5 किलोग्राम तथा स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 50 ग्राम की दर से 700–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे० की दर से 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

4. व्हिप टेल रोग (Whip tail):



व्हिप टेल रोग

रोग जनक : मोलिब्डेनम की कमी।

लक्षण : पत्तियाँ टेढ़ी–मेढ़ी एवं नीले रंग की हो जाती है तथा बाद में मुरझा कर गिर जाती है। नई पत्तियाँ भी विकृत हो जाती है तथा फल गठीला नहीं बन पाता है।

प्रबंधन : अमोनियम मोलिब्डेड 500 ग्रा० प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

मिर्च के कीट

1. सफेद मक्खी (White fly):



सफेद मक्खी

सफेद मक्खी का वैज्ञानिक नाम बेमीसिया टेबेसाई (*Bemisia tabaci*) है।

यह मक्खी सफेद रंग की बहुत ही छोटी लगभग 1–1.5 मि0 मी0 पतंगे के समान होती है। थोड़ी सी आहट पाकर यह तुरंत उड़ने लगती है। इसके निम्फ जूँ के समान मुलायम पीले रंग के होते है। इसके जीवन–काल में तीन अवस्थाएँ अंडे, निम्फ एवं वयस्क होती हैं।

इसके निम्फ एवं वयस्क दोनों ही क्षति पहुँचाते हैं। ये पौधो की पत्तियों से रस चूसते हैं। जिससे पत्तियाँ पीली पड़कर सूखने लगती हैं। यह कीट वाइरस रोग फैलाती है जिससे मिर्च की पत्तियाँ मुड़ जाती हैं। पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है। पौधे की वृद्धि रूक जाती है और शाखाएँ छोटी हो जाती हैं। ऐसे पौधों पर फल नहीं लगते या लगते भी हैं तो आकार में छोटे और विकृत होते हैं।

इसका प्रकोप बंदगोभी, फूलगोभी, सरसों, तोरिया, आलू, बैंगन, भिडी, पपीता एवं कुछ जंगली पौधों पर भी होता है।

प्रबंधन :

यह कीट बहुत ही कोमल होता है और किसी भी कीटनाशी द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है मालाथियान 50 ई0 सी0 का 2 लीटर या इमीडाक्लोप्रीड 17.8 एस0 एल0 का 250 मि0 ली0 1000 लीटर पानी में मिलाकर आक्रांत फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

मिर्च के रोग



डाई बैक रोग

1. डाई बैक रोग (Die Back of Chillies) :

रोग जनक : कोलेटोट्राईकम कैप्सीसाई (*Colletotrichum capsici*)

लक्षण : पौधे की ऊपरी भाग पहले तथा नीचे की भाग बाद में सूखने लगती है।

प्रबंधन :

(i) बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) आक्रांत पौधे को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(iii) कार्बेन्डाजिम तथा मैंकोजेव मिश्रण की दवा 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

2. पर्णकुंचन रोग (Leaf Curl) :



पर्णकुंचन रोग

रोग जनक : पर्ण कुंचन विषाणु (Leaf Curl Virus)

संक्रमण : सफेद मक्खी (White fly) द्वारा।

लक्षण : पत्तियाँ छोटी एवं मुड़ जाती है। पौधे छोटे एवं झाड़ीदार प्रतीत होते हैं। आक्रांत पौधों के फल छोटे एवं विकृत्त हो जाते हैं। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा रोगी पौधों से स्वस्थ पौधों में तेजी से फैलते है।

प्रबंधन :

(i) स्वस्थ बीज का प्रयोग करना चाहिए।

(ii) आक्रांत पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(iii) बीज उपचार करना चाहिए।

(iv) सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए कीटनाशी मिथाइल डेमोटॉन 30 ई०सी० या डाइमेथोएट 30 ई०सी० 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(v) रोगरोधी प्रजाति लगाना चाहिए।

भिंडी के कीट



आक्रांत भिंडी

1. तना एवं फल छेदक (Shoot and fruit borer) :

इस का वैज्ञानिक नाम एरिअस वाइटेला (*Erias vitella*) है।

वयस्क कीट मध्यम आकार का पतंगा होता है। इसका अगला पंख पीलापन लिए हुए उजला रंग का होता है जिसपर हरे रंग की धारी होती है। पिछला पंख सफेद रंग का होता है इल्ली (लार्वा) भूरे–सफेद रंग के होते हैं जिसके पीठ पर छोटे–2 कड़े बाल होते हैं और काले तथा नारंगी धब्बों वाली रेखाएँ होती हैं। इसी कारण इसे धब्बों वाली या चित्तीदार इल्ली भी कहते हैं।

यह कीट भिंडी के अलावा कपास का भी शत्रु है। इस कीट के जीवन–काल में चार अवस्थाएँ होती है, अंडा, लार्वा, प्यूपा, एवं वयस्क। परन्तु इस कीट की इल्लियाँ भिंडी के फलों, फूलों, कलियों एवं पौधों की कोमल टहनियों को क्षति पहुँचाती है। नवजात इल्लियाँ पौधों के प्ररोहों में छेद करके प्रवेश कर जाती है। प्रवेश–छिद्र कीट के मलमूत्र से भरे देखे जा सकते हैं। इसकी क्षति से कलियाँ नहीं खिलती एवं फूल झाड़ने लगते हैं, फल दूषित, छोटे एवं खाने के लायक नहीं रह जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) आक्रांत तना को तोड़कर मिट्टी में गाड़ देना चाहिए।

(ii) जमीन पर गिरी हुई कलिकाओं एवं क्षतिग्रस्त फलों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(iii) फसल समाप्त होने पर भिंडी के पौधों को फलों सहित जला देना चाहिए।

(iv) फसल पर मालाथियान 50 ई0 सी0 का 2 लीटर या कार्बारिल 50 डब्लू0 पी0 लीटर या डेल्टामेथ्रीन 2.8 ई0 सी0 का 400 मि0 ली0 प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।



पर्ण फुदका या जैसिड

2. पर्ण फुदका या जैसिड (Leaf hopper):

जैसिड का वैज्ञानिक नाम ऐमरास्का बिगुटुला (*Amerasca biguttula*) है।

यह लगभग 3–6 मि0 मी0 लंबा पच्चर के आकार का कीट है। इसका रंग हरा–भूरा होता है। इसके अगले पंखों के पिछले भाग पर एक–2 काले धब्बे होते हैं।

भिंडी, कपास, बैंगन, चाय, अंडी, एवं कद्दू के पौधे इसके अन्य परपोषी हैं।

इस कीट के जीवन–काल में तीन अवस्थाएँ होती हैं अंडा, निम्फ एंवं वयस्क जिसमे निम्फ एवं वयस्क दोनों ही पौधों पर बड़ी संख्या में रहते हैं और उनका रस चूसकर पौधों को क्षति पहुँचाते हैं। पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ जाती है तथा ऊपर की ओर मुड़ जाती है और बाद में भूरी होकर सूख जाती हैं। इस प्रकार फुदका–जनित दाह (Hopper burn) कहते हैं। इसके अलावा यह वाइरस रोग भी फैलाते हैं।

प्रबंधन : इमीडाक्लोप्रीड 17.8 एस0 एल0 दवा का 250 मिली लीटर / हे0 की दर से छिड़काव करना चाहिए।

भिंडी के रोग

1. चूर्णी आसिता रोग (Powdery Mildew):



चूर्णी आसिता रोग

रोग जनक : इरीसाइफी सिकोरेसियेरम (*Erysiphe Cichoracearum*)

लक्षण : पत्तियों की सतह पर सफेद चूर्ण दिखाई पड़ते हैं।

प्रबंधन :

(i) गंधक चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से भूरकाव करना चाहिए।

(ii) घुलनशील गंधक 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

2. पीला शिरा मोजैक रोग (Yellow Vein Mosaic Disease):



पीला शिरा मोजैक रोग

रोग जनक : पीला शिरा मोजैक विषाणु (*Yellow Vein Mosaic Virus*)

संक्रमण : सफेद मक्खी (White fly) द्वारा।

लक्षण :

(i) पत्तियों की शिराएं मोटी, चमकीली एवं पीली हो जाती हैं।

(ii) पत्तियाँ पीली, छोटी एवं सिंकुड़कर मुड़ जाती हैं।

(iii) पौधे छोटे हो जाते हैं।

(iv) रोगग्रस्त फलियां छोटी, पीली, कड़ी, एवं विकृत हो जाती हैं।

प्रबंधन :

(i) रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) सफेद मक्खी के नियंत्रण के कीट नाशक डायमेथाएट 30 ई०सी० या मिथाइल डेमोटॉन 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में

घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(iii) रोग रोधी किस्म लगाना चाहिए।

लत्तीदार सब्जियों के कीट

1. फल–मक्खी (Fruit fly)



फल मक्खी

इस कीट का वैज्ञानिक नाम बेक्ट्रोसेरा कुकरबिटी (Bactrocera cucurbitae) है।

यह मक्खी लाल –भूरे रंग की होती है। इसके सिर पर काले तथा सफेद धब्बे पाए जाते हैं तथा पंख पारदर्शी होते हैं।

इस मक्खी के जीवन–काल में चार अवस्थाएँ होते हैं अंडा, मैगट (लार्वा), प्यूपा एवं वयस्क ।

मैगट ही क्षति पहुँचाता है। यह फलों के अंदर गूदे को खाकर नष्ट कर देता है। क्षतिग्रस्त फल कीट के अंडे देने के जगह पर टेढ़ा हो जाता है और आसानी से पहचाना जा सकता है।

प्रबंधन :

(i) क्षतिग्रस्त फलों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) इस मक्खी का प्रकोप होते ही फेरोमोन ट्रैप (मिथाइल यूजीनॉल) चार प्रति एकड़ की दर से खेतों में प्रयोग करना चाहिए।

(iii) आक्रांत फसल पर 1 कि0 ग्रा0 छोआ, 2 लीटर मालाथियान (50 ई0 सी0) तरल दवा का 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर 15 दिनों के अंतराल पर दूसरा छिड़काव करना चाहिए।

लाल कद्दू भृंग (Red pumpkin beetle):



लाल कद्दू भृंग

इस भृंग का वैज्ञानिक नाम आलेकोफोरा फोवीकोलिस (*Aulacobhora foveicollis*) है।

जब पौधे छोटे रहते हैं तब मार्च–अप्रैल महीने में लाल रंग का वयस्क भृंग का आक्रमण होता है। यह पत्तियों, फूलों एवं अंकुरित बीजों को खा जाता है। इसके शिशु (ग्रब) जड़ों एवं जमीन के अंदर के तनों और जमीन पर पड़े हुए फलों को छेदकर खाता है।

प्रबंधन :

(i) गाय के गोबर की राख में थोड़ा किरासन तेल मिलाकर पौधों पर सुबह में भुरकाव करने से भृंग का आक्रमण कम होता है।

(ii) क्लोरपायरीफॉस (2 प्रतिशत) धूल का 20 कि0 ग्रा0 हेक्टर की दर से पौधों की जड़ों के पास मिट्टी में मिला देने से शिशु कीट मर जाते हैं।

लत्तीदार सब्जियों के रोग

1. चूर्णी आसिता रोग (Powdery Mildew):

रोग जनक : इरीसाइफी सिकोरेसियेरम (*Erysiphe Cichoracearum*)

लक्षण : पत्तियों की सतह पर सफेद चूर्ण दिखाई पड़ते हैं। आक्रांत पत्तियाँ सूखकर गिर जाती हैं। संक्रमित पौधे की वृद्धि रूक जाती है। फलें छोटे एवं समय से पहले तैयार हो जाते हैं। यह रोग कद्दू के अलावा खीरा, करैला, तरबूज, खरबूज आदि में लगते हैं।



चूर्णी आसिता रोग

प्रबंधन :

(i) बीज उपचार करना चाहिए।

(ii) रोग रोधी प्रजाति का चयन चाहिए।

(iii) फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iv) घुलनशील गंधक 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

2. मृदुरोमिल आसिता रोग (Downy Mildew):

रोग जनक : सुडोपेरोनोस्पोरा क्यूबेन्सिस (*Pseudoperonospora cubensis*)

लक्षण : सबसे पहले रोग का लक्षण चौथी एवं पांचवीं पत्तियों पर दिखाई पड़ती है। पत्तियों पर पहले पीले रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में भूरे कथई रंग के हो जाते हैं। अंततः पत्तियाँ सिकुड़कर सूख जाती हैं।



मृदुरोमिल आसिता रोग

प्रबंधन :

(i) आक्रांत पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) दो–तीन सालों तक फसल चक्र अपनाना चाहिए।

(iii) रोग रोधी किस्मों को लगाना चाहिए।

(iv) आक्रांत पौधों पर मैंकोजेव या मेटालैक्सिल एवं मैंकोजेव मिश्रित दवा 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(v) नीम आधारित दवाएं 3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

3. फल सड़न रोग (Fruit Rot Disease):

रोग जनक : पीथियम स्पेसीज (*Pythium species*)

लक्षण : फलों पर पीले रंग के जल धारित धब्बे बनते हैं। फलें मुलायम होकर सड़ने लगते हैं। जो फल जमीन के संपर्क में रहते हैं उसमें यह रोग लगने की संभावना अधिक रहती है।



फल सड़न रोग

प्रबंधन :

(i) लत्तरों को चढ़ाने के लिए सहारा देना चाहिए, ताकि फल जमीन के संपर्क में न आए।

(ii) कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (कवकनाशी) 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

फलों के हानिकारक कीट

आम के कीट


आम का मधुआ

1. आम का मधुआ (Mango hopper)

इसका वैज्ञानिक नाम आइडियोस्कोपस ऐटाकिन्सोनाई (*Ideoscopus atkinsoni*), अमरीटोडस ऐटकिन्सोनाई (*Amritodus atkinsoni*) है।

मधुआ कीट 5 मि0 मी0 लंबे भूरे रंग के होते हैं। ये दरारों, छाल और पत्तियों की निचली सतह पर पाये जाते हैं। पेड़ के पास जाने पर ये कीट भनभनाते हुए उड़ते हैं।

इस कीट के जीवन काल में तीन अवस्थाएँ होती हैं, अंडे, निम्फ एवं वयस्क। वयस्क एवं निम्फ (शिशु) दोनों ही पेड़ों की पत्तियों, कोमल टहनियों एवं मंजरों का काफी मात्रा में रस चूसते हैं। जिसके कारण पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं, टहनियाँ सूख जाते हैं, फूल झड़ने लगते हैं। हल्की हवा चलने पर फर गिर जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) पुराने और घने पेड़ों की बेकार शाखाओं को काटकर घनापन कम कर देना चाहिए जिससे पेड़ की निकट की आर्द्रता कम हो जाय और पेड़ों को उचित मात्रा में प्रकाश तथा हवा मिल सके।

(ii) इमीडाक्लोप्रीड 17.8 एस0 एल0 दवा का एक मि0 ली0 चार लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। दूसरा छिड़काव एसीफेट (70 एस0 पी0) का 1 मि0 ली0 प्रति लीटर पानी में घोलकर जब मटर के दाने के बराबर फल लग जाएँ।

2. आम का मिली बग (Mango mealy bug)


आम का मिली बग

मिली बग का वैज्ञानिक नाम ड्रोसिका मैन्जिफेरी (*Drosicha mangiferae*) है।

ये चिपटे बोल आकार के और पंखहीन तथा शरीर पर सफेद दही के रंग का पाउडर चिपका रहता है। इस कीट की तीन अवस्थाएँ होती हैं अंडा, निम्फ (शिशु) एवं वयस्क। शिशु एवं वयस्क दोनों ही रस चुसकर हानि पहुँचाते हैं। ये कीट मुलायम डालों और मंजर वाले भाग में चिपके रहते हैं एवं उनसे रस चूसते हैं जिससे आक्रांत भाग सूख जाते हैं और झड़ जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) मई–जून में बगीचों की जुताई कर देना चाहिए, जिससे मिट्टी के अंदर छिपे अंडा धूप तथा पक्षियों द्वारा नष्ट हो जायें। जोती गई जमीन में फौलीडॉल (2 प्रतिशत धूल) दवा का 250 ग्राम या नीम की खल्ली 1 कि0 ग्रा0 प्रति पेड़ को जड़ के पास मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए।

(ii) कीड़ों को पेड़ पर चढ़ने से रोकने के लिए पेड़ के तने पर जड़ से आधा मीटर की ऊँचाई पर 10 से0 मी0 चौड़ी ऑस्टीकों ग्रीस की पट्टी या 20 से0 मी0 चौड़ी पौलीथीन जमीन से ऊपर तने के चारों तरफ लपेट देना चाहिए। तने के जड़ पर डायमेथोएट दवा का 30 मि0 ली0 30 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

3. आम का तना छेदक (Mango stem borer) :


आम का तना छेदक

इस कीट का वैज्ञानिक नाम बेटोसेरा रूफोमेकुलाटा (*Betocera rufomaculata*) है।

वयस्क कीट भूरे–स्लेटी रंग के 5 से0 मी0 लंबे भृंग होते हैं। इनकी श्रृंगिकाएँ (Antennae) शरीर से काफी लंबी होती है।

इस कीट की इल्लियाँ पेड़ों के तनों एवं शाखाओं में छाल के नीचे वाली लकड़ी में सुरंग बनाकर उसको अंदर ही अंदर खाती हैं। ये सुरंगें कीट के मल, पेड़ की छाल और लकड़ी के छोटे–छोटे टुकड़ों से भरी रहती है। इसके प्रकोप से पेड़ की शाखाएँ एवं तने कमजोर हो

जाते हैं और आसानी से टूट जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) कीट द्वारा बनाये गये छेद से इसके मल को किसी पतले तार से साफ कर छेद में किरासन तेल या पेट्रोल को रूई में भिंगाकर छेद के अंदर तार के सहारे डालकर छेद को गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहिए।

(ii) कीट ग्रसित शाखाओं को काट कर जलाने के काम में लाया जा सकता है।

4. आम का फल वेधक मक्खी (Mango fruit fly) :

इस कीट का वैज्ञानिक नाम बैक्ट्रोसेरा डॉरसेलिस (*Bactrocera dorsalis*) है।


फल मक्खी

वयस्क मक्खी मध्यम आकार की घरेलू मक्खी की तरह ही होती हैं इसके पंख पारदर्शी होते हैं। पंखों एवं शरीर पर गहरे भूरे या जंग के रंग के धब्बे होते हैं। यह कीट अमरूद, बेर, लीची, कटहल, अनार एवं नींबू को भी क्षति पहुँचाता है।

इस कीट के जीवन–काल में चार अवस्थाएँ होती हैं, अंडा लार्वा (मैगट), प्यूपा एवं वयस्क। केवल मैगट ही फलों को क्षति पहुँचाते हैं। ये फलों के गूदे को खाते हैं। क्षतिग्रस्त फलों पर गड्ढे के अंदर गहरे रंग का छेद पाया जाता हैं। फलों मे किण्वन (fermentation) होते हैं और गूदा सड़ जाता है। ऐसे फल पकने के पूर्व ही गिर जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) फेरोमोन ट्रैप (मिथाइल यूजीनॉल) को पेड़ों में लटकाना चाहिए।

(ii) मालाथियान 2 मि0 ली0 दवा में थोड़ा सा छोआ मिलाकर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

फलों के रोग

1. चूर्णी आसिता रोग (Powdery mildew) :

रोग जनक : ओडियम मैंजीफेरी (*Oidium mangiferae*)


चूर्णी आसिता रोग

लक्षण : पत्तियो, टहनियों तथा मंजरों पर उजले रंग के चूर्ण (Powder) दिखाई पड़ते हैं।

प्रबंधन :

(i) मंजर निकलने से पहले घुलनशील गंधक 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(ii) कैराथेन 1 मिली / लीटर पानी में घोलकर दो–तीन छिड़काव करना चाहिए।

2. रूक्ष रोग (Anthracnose Disease) :


रूक्ष रोग

रोग जनक : कोलेटोट्राइकम ग्लोस्पोरोड्स (*Colletotrichum gloesporioides*)

लक्षण : पत्तियो, तनो तथा फलों पर फफोलो (Blister) की तरह काले धब्बे बनते हैं। पत्तियाँ झर जाती है। फलों के छिलके खराब हो जाते हं।

प्रबंधन : बरसात के समय कार्वेन्डाजिम 1.5 ग्राम / लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

3. कजली फफूंद रोग (Sooty mould) :


कजली फफूंद रोग

रोग जनक : कैपनोडियम रेमोसम (*Capnodium ramosum*)

लक्षण : मधुआ कीट, शल्य कीट एवं दहिया कीट के द्वारा स्रावित मधु के समान मीठे एवं चिपचिपे चमकीले पदार्थ पर मोल्ड,

कवक की वृद्धि होती है। इसका आक्रमण नई पत्तियों एवं कोमल टहनियों पर अधिक होती है। इस कवक के बीजाणु (Spores) काले रंग के होते हैं जिससे पत्तियाँ काली हो जाती है।

प्रबंधन : कीटनाशक मोनोक्रोटोफॅस एक मिली / लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

4. कोयली रोग (Black tip of mango) :

रोग जनक : दैहिकी विकार (Physiological disorder) द्वारा।

लक्षण : यह रोग चिमनी से निकलने वाले धुंए से जिसमें मौजूद कार्बन मोनोक्साइड एवं सल्फर डायक्साइड के कारण होता है। फल का निचला भाग काला तथा चपटा हो जाता है।


कोयली रोग

प्रबंधन :

(i) आम को ईट भट्ठों की चिमनियों से दूर लगाना चाहिए।

(ii) बोरेक्स 4 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर मंजर निकलने के पहले तथा फल लगने के बाद पेड़ो पर छिड़काव करना चाहिए।

2. मालफार्मेशन (Malformation) :

रोग जनक : फ्यूजेरियम मोनिलिफोरमी (*Fusarium moniliforme*)

लक्षण : टहनियां तथा मंजर गुच्छे की तरह निकलते है। पत्तियाँ एवं फल विकृत हो जाते हैं तथा फल का स्वाद खराब हो जाता है।


मालफार्मेशन

प्रबंधन :

(i) आक्रांत भाग को काट कर हटा देना चाहिए।

(ii) ताम्रजनित कवकनाशी (ब्लाइटॉक्स–50) 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर आवश्यकतानुसार छिड़काव करना चाहिए।

अमरूद के कीट

1. छाल–भक्षी सिल्लू (इल्ली) (Bark eating caterpillar) :

इस कीट का वैज्ञानिक नाम इन्डारबेला क्वाड्रीनोटेटा (*Indarbela quadrinotata*) है।

वयस्क कीट 20 से 25 मि0 मी0 लंबे, पीले–भूरे पतंगे होते हैं। अगले पंखों पर लहरदार स्लेटी या गहरी भूरी धारियाँ होती हैं जबकि पिछला पंख भद्दे पीले रंग के होते हैं। इस कीट की इल्लियाँ भद्दे भूरे रंग की होती हैं।

आँवला, बेर, नींबू, आम, लीची, जामुन, अनार एवं शहतूत इत्यादि पौधों को भी यह कीट क्षति पहुँचाते है।

इस कीट की चार अवस्थाएँ होती हैं, अंडा लार्वा, प्यूपा एवं टेढ़ी–मेढ़ी सुरंगें बनाकर उनके उत्तकों (Tissues) को खाली हैं। छाल पर इनके मल जाल में फँसे दिखाई पड़ते हैं।


छाल–भक्षी सिल्लू

प्रबंधन :

(i) जिन पेड़ों मे इसका प्रकोप हो, उनके छेदों में तार डालकर इल्लियों को नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) पेड़ों के तनों एवं शाखाओं पर कीट द्वारा बनाए गए जाले को साफ करके तनों के छेदों में डी0 डी0 वी0 पी0 या मालाथियान दवा के प्रयोग से इल्लियाँ नष्ट हो जाती हैं।

अमरूद के रोग

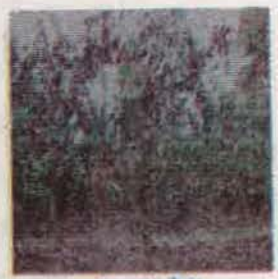
उकठा रोग

1. उकठा रोग (Wilt) :

रोग जनक : फ्यूजेरियम स्पेसीज *(Fusarium species)*

लक्षण : पत्तियों तथा पौधे मुरझाकर सूख जाते हैं। आक्रांत पौधे के तनो को बीच से चीड़ने पर काले रंग की धारी दिखाई पड़ती है।

प्रबंधन :

(i) पौधे की बुआई के समय चूना का प्रयोग करना चाहिए।

(ii) आक्रांत पौधों में कार्वेन्डाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए।


रूक्ष रोग

2. रूक्ष रोग (Anthracnose disease) :

रोग जनक : कोलेटोट्राइकम ग्लोस्पोरोडस *(Colletotrichum gloeosporioides)* :

लक्षण : फलों पर खुरदरे धब्बे बन जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) आक्रांत फलों को नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) ताम्रजनित कवकनाशी कॉपर आक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी से छिड़काव करना चाहिए।

अनार की तितली (Anar butterfly) :


अनार की तितली

इस कीट का वैज्ञानिक नाम विरचौला आइसोक्रेटा (*Virachola isocrata*) है । इस कीट का आक्रमण अनार, लीची, सपोटा, इमली एवं बेर पर भी होता है

यह मध्यम आकार की तितली है । नर कीट नीली– बैंगनी रंग का होता है जबकि मादा तितली भूरा – बैगनी होती है । इसके दोनों पंखो पर नारंगी रंग का धब्बा पाया जाता है। इल्ली गहरे भूरे रंग की होती है ।

इस कीट इल्लियॉ हानिकारक होती हैं। ये फलो के अंदर घूस जाती है एवं गूदे तथा बीजों को खाकर क्षति पहुँचाते हैं। कीट अपने मलमूत्र द्वारा बंद कर देता है। आक्रांत फल गिर भी जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) जमीन पर गिरे हुए सभी फलों को एकत्र करके मिट्टी में गाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) फलों को कपड़े के थैले से ढँक देने से मादा कीट फल पर अंडा नहीं दे पाती है।

(iii) आक्रांत पौधों पर मालाथियान या क्वीनलफॉस दवा का 2 मि0 ली0 प्रति लीटर पानी में धोलकर छिड़काव करने से इल्लियाँ मर जाती है।

केले के हानिकारक कीट


केला भृंग

1. केला भृंग (Banana beetle) :

इस भृंग का वैज्ञानिक नाम कोस्मोपोलाइटिस सोर्डिडस (*Cosmopolites sordidus*) है।

वयस्क भृंग काले रंग लगभग 2.5 से0 मी0 लंबा होता है। इसका तुंड (Snout) लंबा व आगे से मुड़ा हुआ होता है। इसका निम्फ (भृंगक) पैर रहित, आंसल क्रीमी सफेद रंग का होता है।

इस कीट के जीवन–काल की तीन अवस्थाएँ होती हैं, अंडा, निम्फ एवं वयस्क। निम्फ एवं वयस्क दोनों ही केले को क्षति पहुँचाते हैं। मादा कीट प्रकंदों में छेद बनाकर अंडे देती है। इससे भृगंक निकलकर प्रकंदों एवं तनों में छेद करके अंदर ही अंदर सुरंगे बनाते हैं। जिससे पौधे बीमार दिखते हैं, उनकी बढ़वार कम हो जाती है। गुच्छों में केलों की संख्या बहुत कम हो जाती है और केले छोटे–छोटे लगते हैं। तेज हवा चलने पर क्षतिग्रस्त स्थान से पौधे टूट कर गिर जाते हैं।

प्रबंधन :

(i) क्षतिग्रस्त पौधों को प्रकंद सहित नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) पौधों के आस–पास पूरी सफाई रखनी चाहिए।

(iii) डायमेथोएट 30 ई0 सी0 दवा का 1 मि0 ली0 प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

2. केले का तना छेदक (stem borer) :

इस कीट का वैज्ञानिक नाम ओडोइपोरस लौंगीकोलिस (*Odoiporus longicollis*) है।

यह एक भृंग है। यह गहरे लाल रंग एवं भूरे रंग का 1.5–2 से0 मी0 लंबा होता है। यह तुंड रहित होता है। सिर नुकीला होता है। बंची शिखा रोग इस कीट के निम्फ ही हानि पहुँचाते हैं। निम्फ लंबी सुरंगे बनाकर क्षति करते हैं। एक तने में बहुत से निम्फ पाए जाते हैं। क्षतिग्रस्त पौधे मुरझाए हुए दिखाई पड़ते हैं। तेज हवा चलने पर क्षतिग्रस्त तने बीच से टूट जाते हैं।



केले का तना छेदक

प्रबंधन : इसका नियंत्रण केला भृंग की तरह ही करना चाहिए ।

केले के रोग

1. पनामा उकठा रोग (Panama wilt) :

रोग जनक : फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम भार० क्यूवेन्स (*Fusarium oxysporum var cubense*)

लक्षण : पत्तियों या पौधे का अचानक सूखना। पत्तियाँ पीली हो जाती है एवं सूख कर गिर जाती है।



पनामा उकठा रोग

प्रबंधन :

(i) रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) रोगमुक्त सकर (Sucker) को लगाना चाहिए।

(iii) रोग रोधी प्रजाति लगाना चाहिए।

(iv) कार्वेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

2. बंची शिखा रोग (Bunchy top) :

रोग जनक : विषाणु (Virus)

संक्रमण : कीट द्वारा

लक्षण : पत्तियों छोटी पत्तली एवं ऊपर की तरफ घनी दिखाई पड़ती है।



बंची शिखा रोग

प्रबंधन :

(i) आक्रांत पौधों को नष्ट कर देना चाहिए।

(ii) कीटनाशी डायमेथोएट 30 ई०सी० 1 मिली / लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

नींबू के हानिकारक कीट

1. नींबू की तितली (Citrus butterfly) :


नींबू की तितली

इस तितली का वैज्ञानिक नाम पैपिलियों डेमोलियस (*Papilioi demoleus*) है।

ये तितलियाँ देखने में बहुत ही खूबसूरत होती हैं। पंख काले होते हैं जिसपर पीले धब्बे होते हैं एवं पीछे के प्रत्येक पंख पर लाल रंग का गोल धब्बा होता है। इसके पिल्लू (इल्ली) सफेद एवं काली चित्तीदार चिड़ियों के मल से मिलती–जुलती होती हैं। ये बड़ी होने पर गहरे रंग की हो जाती है।

इस कीट की इल्लियाँ पत्तियों को खाकर क्षति पहुँचाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर यह कीट पौधों को पूर्णतः पत्तियों से विहीन कर देते हैं।

प्रबंधन : पौधों पर क्वीनलफॉस का 2 लीटर या कारबारिल का 2 कि0 ग्रा0 प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

नींबू के रोग

1. कैंकर रोग (Citrus canker) :


कैंकर रोग

रोग जनक : जेन्थोमोनास साइट्री (*Xanthomonas citri*) :

लक्षण : पत्तियों, टहनियों तथा फलों पर हल्के पीले रंग के खुरदरे धब्बे उभर जाते हैं, एवं इन खुरदरे धब्बों के बीच गड्ढा हो जाता है।

प्रबंधन :

(i) आक्रांत पौधों को काटकर जला देना चाहिए।

(ii) ब्लाईटॉक्स 50 कवकनाशी 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

2. गमोसिस रोग (Gummosis)


गमोसिस रोग

रोग जनक : फाइटोफ्थोरा स्पेसीज (*Phytophthora species*)

लक्षण : तना के छाले में दरार पड़ जाना तथा उसमें से गोंद तथा तैलीय पदार्थ निकलना।

प्रबंधन :

(i) आक्रांत भाग को काटकर हटा देना चाहिए।

(ii) कॉपर आक्सीक्लोरोइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

भंडारित अनाज के हानिकारक कीट

साधारणतः गेहूँ, चावल, दलहन एवं अन्य खाद्यान्नों का भंडारण किया जाता है। भंडारण के दौरान अनाज में कई प्रकार के हानिकारक कीड़ों का प्रकोप होता है। इन कीड़ों का भंडार में प्रवेश विभिन्न प्रकार से होता है जैसे प्रौढ़ कीड़ों का उड़कर या शिशुओं का रेंगकर संग्रहित अनाजों में पहुँचाने, खेतों में फलियों तथा बालियों में ही कीड़े लग जाते हैं और अनाज के साथ वे भंडार में आ जाते हैं, खलिहानों के आस–पास के कूड़े में छिपे कीट भी अनाज के साथ भंडार में आ जाते हैं। अनाज रखने के बोरों में कीड़े पहले से रहते हैं जो अनाज के साथ भंडार में आ जाते हैं। गोदाम की दीवारों की दरारों में भी कीड़े छिपे रहते हैं जो अनाज का भंडारण करते ही उसमें लग जाते हैं। ये कीड़े अनाज के अंदर पाये जाने वाले पौष्टिक तत्त्वों का भी ह्रास करते हैं। भंडारित अनाज में निम्नलिखित कीड़ों का प्रकोप होता है :–

1. चावल का घुन (Rive weevil) :


चावल का घुन

इस घुन का वैज्ञानिक नाम साइटोफिल्म ओरइजी *(Sitophilus oryzee)* है।

इस कीट का वयस्क का (घुन) लगभग 3.5 मि0 मी0 लाल भूरे रंग का होता है जिसके सिर के आगे प्रौथ (Snout) होता है। इसका शिशु (ग्रब) उजले रंग का होता हैं, इस कीट के जीवन काल में भी चार अवस्थाएँ होती हैं, अंडा, ग्रब, प्यूपा एवं वयस्क।

चावल का घुन चावल और गेहूँ का कट्टर शत्रु है। इसके वयस्क एवं शिशु दोनों ही अनाज को क्षति पहुँचाते हैं। दाने खोखले हो जाते हैं, फलस्वरूप न तो वे बोने के लायक रह जाते हैं और न खाने योग्य। जब प्रकोप शुरू होता है तब शिशु के घुसने का छिद्र इतना छोटा होता है कि वह दिखाई नहीं पड़ता है और उसके अंदर के पदार्थों को खाते हैं। जब शिशु वयस्क बनकर दाने से बाहर निकलने के क्रम में छिद्र को बड़ा कर देता है तब उसके प्रकोप का पता चलता है।

2. गेहूँ का खपड़ा भृंग (Khapra beetle) :


खपड़ा भृंग

इस भृंग का वैज्ञानिक नाम ट्रोगोडर्मा ग्रेनेरियम (*Trogoderma granarium*) है।

यह गेहूँ के अलावा ज्वार, मक्का, बाजरा, चावल तथा अन्य अनाजों पर भी आक्रमण करता है।

वयस्क भृंग लगभग 2 मि0 ली0 पीली लाल–भूरे या काले रंग का एवं शिशु (ग्रब) पीले –उजले रंग का होता है। इसके शिशु ही अधिक नुकसान करते हैं। वयस्क द्वारा हानि बहुत ही कम होती है। शिशु कीट दाने का भ्रुण वाला भाग खाता है। अधिक प्रकोप होने पर केवल छिलका मात्र शेष रह जाता है।

3. दाल का घुन (Pulse beetle) :


दाल का घुन

इसका वैज्ञानिक नाम कैलोसोब्रुकस चायनेन्सिस (*Callosoberuchus chinensis*) है।

इसका प्रकोप चना, मटर, सेम, मूँग, मसूर, अरहर आदि पर होता है।

इसका वयस्क घुन चॉकलेट रंग का लगभग 3.2 मि0 मी0 का होता है। शिशु (ग्रब) मांसल और उजले रंग का होता है।

फरवरी के अंत में मादा कीट गोदामों से उड़कर खेतों में पहुँच जाती हैं। खेत में फलियों पर अंडे दे देती है। अंडे से ग्रब निकलकर फली में छेदकर अंदर घुसकर दाने तक पहुँच जाता है और इस परह गोदाम में पहुँच जाता है।

4. चावल का पतंगा (Rice Moth) :


चावल का पतंगा

इस कीट का वैज्ञानिक नाम कोरसायरा सिफेलोनिका (*Corcyra cephalonica*) है।

यह चावल के अलावा मक्का, ज्वार, दाल, तेलहन, काजू, बादाम, इत्यादि पर भी आक्रमण करता है।

वयस्क पंतगा पीले–भूरे रंग का लगभग 15 मि0 मी0 होता है। इसका शिशु (लार्वा) उजले रंग का होता है।

शिशु कीट अनाजों या उनके टुकड़ों में छेदकर खाते हैं। ये अनाजों को आपस में जाला बनाकर उसके अंदर रहकर खाते हैं। यही जाला इस कीट के प्रकोप का पहचान है।

प्रबंधन :

(i) भंडारण के लिए गोदामों का पक्का होना चाहिए और उसकी अंदर की दीवारों पर नमी निरोधक प्लास्टर होना चाहिए। साथ ही खिड़की एवं दरवाजे ऐसे होने चाहिए जो घुमण करते समय ठीक से बंद हो जाय।

(ii) पुराने गोदामों का कूड़ा अथवा भूसा निकाल कर जला देना चाहिए तथा उसकी दरारों को सीमेंट से बंद कर अंदर से सफेदी कर देनी चाहिए। गोदाम की बाहरी दीवारों को 1.5 मीटर की ऊँचाई तक कोलतार से पुतवा देना चाहिए।

(iii) अनाज रखने से पहले गोदाम में इ. डी. सी. टी. से 24 घंटे तक 10 लीटर प्रति 30 घन मीटर स्थान की दर से घुमण करना चाहिए।

(iv) यदि अनाज को बोरियों में रखना है तो बोरियों को उलट कर छह घंटे तक तेज धूप में अलग–अलग बिछाकर सुखाना चाहिए। अनाज को गोदामों में भरने के पहले तेज धूप में पतला बिछाकर 6 घंटे तक सुखाना चाहिए। कमरे में नीचे भूसा अथवा लकड़ी के चौखटों, पटरों या पॉलीथीन की चादर या बाँस की चटाई बिछाकर बोरियों को रखना चाहिए ताकि जमीन की नमी अनाज तक नहीं पहुँचने पाये। बोरियों को दीवारों से 50 से0 मी0 दूर रखते हुए 4–5 मी0 ऊँचाई तक रखना चाहिए।

(v) कोठली की दरारें अनाज रखने के पहले भर देना चाहिए।

(vi) एक सौ किलोग्राम अनाज में 5 किलोग्राम सूखी हुई नीम की पत्तियाँ अच्छी तरह से मिलाकर रखने से कीड़ों से बचाव होता है।

(vii) चूहों के लिए जहरीले चारे का प्रयोग करना चाहिए।

चूहा नियंत्रण

(i) एल्यूमिनियम फॉस्फाइड (3 ग्राम प्रति बिल) का प्रयोग खेतों में चूहा नियंत्रण के लिए किया जाता है।

(ii) जिंक फॉस्फाइड एवं वारफेरिन का प्रयोग घरों एवं गोदामों में चूहानाशक के रूप में किया जाता है।

प्रश्नवाली :

1. धान की फसल को हानि पहुँचाने वाले प्रमुख दो कीट एवं रोगों का नाम लिखिए।
2. हॉपर बर्न क्या होता है। इसे फैलाने वाले कीट का वैज्ञानिक नाम लिखिए।
3. बंगाल में धान के किस रोग के प्रकोप से अकाल पड़ा था ?
4. चना में फली छेदक कीट के आक्रमण का लक्षण बताइए।
5. अरहर का उकठा (Wilt)रोग के लक्षण एवं प्रबंधन लिखिए।
6. मक्का के हानिकारक कीट के नाम लिखिए।
7. लाही के प्रकोप का अनुकुल मौसम क्या है ?
8. थ्रिप्स किस फसल को अधिक हानि पहुँचाता है ?
9. बैंगन के प्ररोह एवं फल छेदक कीट के आक्रमण के लक्षण बताइए।
10. डायमंड बैक मौथ के आक्रमण के लक्षण बताइए।
11. दो मिट्टी जनित कीट एवं रोग का नाम बताइए।
12. क्लोरपाइरीफॉस दवा का प्रयोग किस कीट के रोकथाम के लिए किया जाता है ?
13. बीज के उपचार से क्या लाभ होता है ?
14. ईख फसल को हानि पहुँचाने वाले दो कीट का नाम एवं आक्रमण के लक्षण बताएँ।
15. सेहूँ रोग किस फसल मे होता है ? इसके लक्षण एवं प्रबंधन के उपाय बताएँ।
16. आम का मधुआ के अधिक आक्रमण होने से क्या होता है।
17. फलमक्खी का आक्रमण किन–किन फसलों पर होता हैं ?

18. केला के दो प्रमुख रोगों का नाम एवं उनके आक्रमण के लक्षण बताएँ।
19. आलू के पतंगा कीट का वैज्ञानिक नाम बताएँ। इसका भंडारण के प्रबंधन तकनीक बताएँ।
20. लत्तर वाली सब्जियों में लगने वाली दो बीमारियों का नाम एवं लक्षण बताएँ।

खाली जगहों को भरें :

1. गंधी बग का आक्रमण धान के .....अवस्था में होता है।
2. फसलों में वायरस रोग फैलाने वाले प्रमुख कीट हैं....., ... एवं .....।
3. बंची टॉप रोग .....फसल में होता है।
4. सफेद मक्खी .....रोग का वाइक है।
5. मल फारमेशन बीमारी .....फसल में होता है।
6. खैरा रोग .....की कमी से होता है।
7. पीत शीरा मोजैक .....फसल में होता है।
8. पत्तियों का छोटा होना रोग .....फसल मे होता है।
9. ट्राइकोडर्मा .....है।
10. ब्लास्ट रोग का लक्षण .....होता है।
11. दलहनी फसलों में लगने वाले दो प्रमुख रोग ..... एवं ..... हैं।
12. धान मे तना छेदक के आक्रमण की पहचान .....और .....से होता है।
13. हरा मधुआ की .....से रस चूसता है जबकि भूरा मधुआ.....से रस चूसता है।
14. सैनिक कीट ..... के समय धान के पौधे पर चढ़कर ..... काटकर गिरा देता है।
15. कजरा पिल्लू दिन में .....छिपे रहते हैं तथा .....में पौधों को काटकर गिरा देते हैं।
16. मक्का फसल में तना छेदक कीट के आक्रमण से तना के बढ़ने वाला भाग सूख जाता है जिसे .....कहते हैं।
17. चना के फली छेदक का प्रकोप कम करने के लिए ..... फसल के साथ अन्तर्वतीय .....के अनुपात में करना चाहिए।
18. .....का आक्रमण मटर फसल पर अगेती एवं पिछेती फसल पर अधिक होता है।
19. आम के तना छेदक कीट की रोकथाम के लिए ..... रूई में भिंगोकर छेद के अन्दर डालें एवं गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहिए।
20. अनार की तितली की .....हानिकारक होती है और ..... के अंदर घूसकर गुदे तथा बीजों को खाती हैं।
21. भंडारित अनाज के प्रमुख कीट है ....., ... और .....।
22. अनाज को भंडारित करने के पहले अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए ताकि ..... से अधिक नमी न हो।

5.3 कीट–नियंत्रण विधियाँ

बच्चों अभी तक आपने फसलों के हानिकारक कीटों एवं रोगों के बारे में पढ़ा। इन हानिकारक कीटों एवं रोगों को नियंत्रित करना अतिआवश्यक है। कीट एवं रोग नियंत्रण की अनेक प्रकार की विधियाँ हैं :

1. कर्षण विधि (Cultural method)
2. भौतिक विधि (Physical method)
3. यांत्रिक विधि (Mechanical method)
4. जैविक विधि (Biological method)
5. विनियम विधि (Legal method)
6. रासायनिक विधि (Chemical method)

कर्षण विधि

कर्षण विधि में गहरी जुताई, स्वच्छ कृषि, किस्मों का प्रयोग, फसल चक्र, पौधों की व्यवहार, प्रतिरोधात्मक खेती, खाद–पानी का समुचित प्रबंध आदि हैं।

फसल कटनी के बाद खेत की गहरी जुताई करने से मिट्टी में रहने वाले फफूँद, कीट के अंडे, लार्वा एवं प्यूपा आदि मिट्टी के अंदर से ऊपर हो जाते हैं। फलस्वरूप सूर्य के प्रकाश, पक्षी, शिकारी जीवों एवं परजीवी कीटों के द्वारा नष्ट कर दिये जाते हैं।

स्वच्छ कृषि में खेतों में उपस्थित अनावश्यक घास एवं संक्रमण के स्रोत–फसलों के अवशेष को पूरी तरह से नष्ट कर देना चाहिए ताकि घास एवं अवशेषों में छिपे हुए हानिकारक कीट एवं कवक नष्ट हो जायें। बीज बोने से पहले बीज की सफाई अच्छी तरह से कर लेना चाहिए जिससे बीज में मिला हुआ घास का बीज न हो। साथ ही बीजोपचार कर लेना चाहिए।

प्रतिरोधात्मक किस्मों के बीजों का व्यवहार करने से कीट एवं रोग की समस्या बहुत कम हो जाती है। फसल–चक्र अपनाकर कीट एवं रोग की श्रृंखला को तोड़कर उनके प्रभाव को कम किया जा सकता है क्योंकि भोजन की अनुपस्थिति में कीट की भूख से मृत्यु हो जाती है।

सघन पेड़ों पर कीट का प्रकोप अधिक होता है। यदि पौधों के टहनियों का छटनी कर कम सघन कर दिया जाता है तो कीट का प्रकोप कम हो जाता है। मिश्रित खेती में एक ही प्रकार के पौधे का फासला दूर–दूर हो जाता है तथा उनके मध्य में स्थित दूसरी फसल के पौधे क्रमशः एक दूसरे के हानिकारक कीटों को रूकावट पैदा करते हैं जिससे दोनों ही प्रकार के पौधों अधिकतर प्रकोप से बच जाते हैं।

कभी– कभी नेत्रजनीय खाद पौधों के कीट की सुग्राह्यता को बढ़ता है जबकि पोटाश इसको कम करता है। इसलिए इसके समुचित मात्रा में प्रयोग से फसल स्वस्थ होते हैं, साथ ही कीट की संभावना कम होती है।

भौतिक विधि :

(i) पानी का प्रयोग : कीटों के प्रकोप को कम करने के लिए पानी का प्रयोग किया जाता है। रेंगने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए नालियाँ खोदकर पानी भर देते हैं। जमीन में रहने वाले कीटों जैसे दीमक, चीटिंयाँ और कजरा पिल्लू के नियंत्रण के लिए सिंचाई कर देते हैं जिससे उनका प्रकोप कम हो जाता है।

(ii) सुखाना : अनाजों को सुखाने से कीट मर जाते हैं। अनाज की नमी– मात्रा 8.2% से नीचे रहने से सुंडी भर जाते हैं।

(iii) ताप अथवा धूप का प्रयोग : ताप का प्रयोग बीजों एवं गोदामों में छिपे हुए कीड़ों का मारने के लिए किया जाता हैं 130°F से लेकर 140°F तक 30 मिनट तक पदार्थों को गर्म करने से उनके अंदर छिपे कीट मर जाते हैं और इस सीमा तक गर्म करने से बीजों के अंकुरण पर भी कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता।

जून की कड़ी धूप में गर्म पक्के फर्श पर बीजों को एकहरा परत चार घंटों तक फैला कर रखते हैं जिससे उनमें छिपी सूंडियाँ मर जाती है।

यांत्रिक विधि

यांत्रिक विधियाँ में यंत्रो तथा यांत्रिक क्रियाओं का प्रयोग होता है। पौधे के रोगग्रस्त भागों को काटकर हटा देना चाहिए। संक्रमित पौधों को उखाड़कर नष्ट करना एवं उन्हें जला देना चाहिए।

(i) हाथ से एकत्रित करना :पौधों का वह भाग जिसपर अंडे या कीटों की अन्य जीवन अवस्थाएँ पाई जाती हैं, उन्हें हाथों से चुनकर नष्ट किये जा सकते हैं। खेतों से हॉपर (फूदका) को एकत्रित करने के लिए कपड़े के बड़े–बड़े थैलों का भी प्रयोग किया जाता है। टीन की बड़ी चादरों पर कोलतार लगाकर हॉपर वाले खेतों में होकर निकला जाय ताकि उन पर बहुत से हॉपर कूद कर चिपक जाते हैं। उड़ने वाले कीड़ों की संख्या कम हो तो हस्त–जाल द्वारा भी पकड़ा जा सकता है।

(ii) रस्सी खींचना :धान के केसवर्म (बकया) कीट की पिल्लू को पौधों से गिरने के लिए रस्सी को किरासन तेल में भिंगाकर एवं तानकर दो आदमी पौधों पर से खींचते चलते जाते हैं, जिससे कीट पानी में गिर जाते हैं तथा एकत्रित कर नष्ट कर दिये जाते हैं।

(iii) रोक लगाना : घेरलू कीटों को रोकने के लिए परदा, जालीं तथा मसहरी इत्यादि का प्रयोग करते हैं।

कूदने वाले कीटों से फसल को बचाने के लिए खेत के चारों ओर गहरी खाई खोद देते हैं।

पेड़ों पर रेंगकर चढ़ने वाले कीटों को रोकने के लिए तने के चारों ओर रोजीन या ऑस्टिको बैंड लगाते हैं। फलों की फलमक्खी से सुरक्षा कपड़े की थैली द्वारा कर सकते हैं।

(iv) प्रकाश प्रपंच (Light-Trap) :यह उपकरण उन कीटों के लिए प्रयोग किया जाता है जो रात्रि को प्रकाश पर आते हैं। इसमें एक बल्ब या दीपक लगा होता है जिसके ऊपर टीन का ढक्कन और चारों ओर शीशा तथा नीचे एक बर्तन में तेल तथा पानी भरा होता है। टीन के ढक्कन और कांच की दीवारों के बीच में कीटों के अंदर घुसने के लिए रास्ता होता है और कीट अंदर घुसकर ज्योंहि उड़ता है कांच की दीवारों से टकरा कर मिट्टी के तेल में गिर पड़ता है और मर जाता है।

(v) फेरोमोन ट्रैप (Pheromone Trap) :फेरोमोन ट्रैप में एक पौलीथीन बैग होता है जिसके ऊपर प्लास्टिक की तस्तरी होती है जिसके मध्य में रबर की ल्यूर (Lure) लगी होती है, तथा इसमें फँसकर मर जाता है। लकड़ी के सहारे खेतों में 10 ट्रैप हेक्टर की दर से खड़े करते हैं।

जैविक नियंत्रण विधि

जैविक विधि में रोगजनक के जीवाणु और नाशक कीटों के प्रकृति में पाये जाने वाले सभी छोटे–बड़े प्राकृतिक शत्रुओं को खोजकर, इकट्ठा कर या प्रयोगशाला में अधिक संख्या में वृद्धि कर रोग कारकों एवं कीटों के नियंत्रण में उपयोग किया जाता है। प्राकृतिक शत्रुओं में मुख्यतः कवक, जीवाणु, विषाणु, परजीवी सूत्रकृमि और परजीवी कीट का प्रयोग किया जाता है। विभिन्न प्रकार की मकड़ियाँ जैसे : भ्रमिपोतक सभी प्रकार के मधुआ कीट के निम्फ, वयस्क, पत्रलपेटक एवं तना छेदक को भक्ष कर नियंत्रक का कार्य करती है। कुछ परजीवी–कीट हानिकारक कीटों के अंडों में, पिल्लू में या प्यूपा में अपने अंडे डाल देती हैं। इनके अंडे से पिल्लू के निकलने पर मेजबान कीट नष्ट हो जाते हैं और परजीवियों की संख्या में वृद्धि होती है जो हानिकारक कीट को नियंत्रण में रखती है। जैसे : ट्रायकोग्रामा जाति के परजीवी मौथ (पतंगा) और तितलियों के अंडो को तथा किलोनीस ब्लैकबर्नि इनके पिल्लू को नष्ट करते हैं। कुछ फफूँद कीटों को ग्रसित करते हैं जैसे : व्यूवेरिया वेशियाना धड़ छेदक के पिल्लू को तथा हिरसूटेला सिटरफारमिस मधुआ कीट को आक्रांत करते हैं।

आज की विशेष परिस्थितियों में रोग–व्याधियों एवं कीटों के नियंत्रण के लिए रसायानों के प्रयोग के दुष्परिणाम सामने आ रहे है। अतः यह जरूरी है कि पीड़क–नाशकों (रसायनों) पर निर्भरता कम हो तथा जैविक विधियों का प्रयोग रोग नियंत्रण के लिए अधिक-हो।

जैविक विधि द्वारा नियंत्रण कम खर्चीला, संतुलित, प्रभावी एवं स्थायी उपाय है। साथ–साथ इससे हमारे वातावरण को कोई हानि भी नहीं पहुचती है।

धानिक / विनियम (लीगल) विधियाँ :

इनके अंतर्गत वे सभी वैधानिक उपाय सम्मिलित है जिसके द्वारा रोगों और हानिकारक कीटों का प्रवेश एक देश से दूसरे देश या

उसके विभिन्न भागों में न हो सके। साथ ही साथ अगर बीमारियाँ या कीटों का किसी स्थान विशेष में प्रवेश हो गया है तो उन्हें आगे फैलने से रोका जा सके। Destructive Insects and pests Act (DIPA), 1914 के तहत समय–समय पर सड़क, रेल, हवाई एवं जहाज मार्गों के द्वारा बीज एवं पौधों के भाग के परिवहन को अच्छी तरह मुआयना किया जाता है एवं कीट– व्याधियों से युक्त पाये जाने पर उन्हें नष्ट कर दिया जाता है।

रासायनिक नियंत्रण विधि : जब कीटों का नियंत्रण रसायन के प्रयोग द्वारा किया जाता है उसे रासायनिक विधि कहते हैं एवं प्रयुक्त रसायन को कीटनाशी कहते हैं। कीटनाशक दवाओं की मारक क्षमता भिन्न–भिन्न होती हैं और ये कीड़ों पर अलग–अलग ढंग से प्रभाव डालते हैं। सामान्य रूप से कीटनाशी दवाओं का प्रनाव तीन तरह से होता है; आंतविष (Stomach poison), स्पर्शीय विष (Contact poison) और आंतरिक विष (Sytemic poison)।

आंतविष : इस वर्ग के कीटनाशी दवाओं का व्यवहार अब बिल्कुल बंद है। सिर्फ चूहों को मारने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। जैसे : जिंक फास्फाइड एवं वारफेरिन।

स्पर्शीय विष : आज कल इस वर्ग के विष का विशेष रूप से प्रयोग होता है। कीटनाशी दवा के स्पर्श होने के बाद विष, कीट के अंदर प्रवेश कर कीड़ों को मारने में सहायक होता है। जैसे : मालाथिआन, क्वीनलफॉस, कार्बारिल एवं मिथाईल पाराथियान इत्यादि।

आंतरिक विष : इसके अंतर्गत कीटनाशी दवा पौधों के अंदर प्रवेश कर जाते हैं। पौधा में जहर फैल जाती है और जब कीट उसे खाते हैं, तब वे मर जाते हैं। आंतरिक विष रस चुसनेवाले कीड़ों के लिए सबसे ज्यादा प्रभावकारी है। इसके अंतर्गत डायमेथोएट, कार्बोफ्यूरान, फोरेट, मिथाईल डेमेल्टान एवं इमीडाक्लोप्रीड इत्यादि।

कीटनाशी दवाओं को बाजार में आने से पहले विभिन्न रूपों में बदला जाता है। जहरीला होने के कारण इसे बिना दूसरे रूप में लाये व्यवहार करना संभव नहीं है। विशेष रूप से कीटनाशक दवा की तीन रूपों, जैसे : धूल (Dust), तरल (Liquid, Emulsion) घुलनशील पाउडर और दानेदार (Granular) के रूप में उपलब्ध कराये जाते हैं।

कीटनाशी दवा के डिब्बों, बोतलों या पैकेटों पर 50, 40, 25, 5 या अन्य कोई अंक लिखे रहते हैं, इसका अर्थ यह है कि 100 में 50, 40, 25, और 5 भाग ही क्रियाशील तत्त्व (कीट को मारने के प्रभावकारी तत्त्व) है और शेष निष्क्रिय तत्त्व है।

कीटनाशी दवा का नाम

कीटनाशी दवाओं के नाम की जानकारी रखना आवश्यक है। दो तरह के नाम होते हैं पहला रासायनिक नाम और दूसरा व्यापारिक नाम। उदाहरणार्थ, कार्बारिल–रासायनिक नाम और सेविन या किलेक्स कार्बारिल व्यापारिक नाम हैं। एक ही रसायन को विभिन्न व्यापारिक संस्थान भिन्न–भिन्न नाम रखते हैं।

पानी की मात्रा : सामान्यतः दो प्रकार के छिड़काव यंत्र उपलब्ध है। एक उच्च आयतन और दूसरा निम्न आयतन। उच्च आयतन वाले छिड़काव यंत्र के लिए 500 से 1000 लीटर प्रति हेक्टर की दर से पानी की आवश्यकता होती है जबकि निम्न आयतन वाले छिड़काव यंत्र के लिए 40 से 150 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। पानी की आवश्यकता फसल के बढ़वार पर भी निर्भर करता है लेकिन दवा की मात्रा हमेशा एक ही रहती है।

समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन

समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन पारितांत्रिक संरचना के आधार पर बनी एक ऐसी विधि है जिसमें कीटों एवं रोगों का स्तर को आर्थिक क्षति स्तर (Economic injury level) सीमा रेखा के नीचे रखने के लिए उपलब्ध सारी तकनीकों का व्यवहार किया जाता है। समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन अपनाने से मित्र एवं शत्रु कीटों में संतुलन बना रहता है, वातावरण में प्रदूषण कम होता है, जीवनाशियों के अंधाधुंध प्रयोग रूक जाते है, उपचारित फसलों में कीटों एवं रोगों की पुनः वृद्धि रूक जाती है। उत्पादन लागत कम होती है, अधिकतम फसल उत्पादन होता हैं साथ–साथ शत्रु कीटों एवं रोगों के प्राकृतिक शत्रुओं की सुरक्षा होती है एवं रसायनों के अवशिष्ट दुष्प्रभाव भी कम हो जाता है।

समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन में कर्षण विधि, यांत्रिक विधि, भौतिक विधि, जैविक विधि और रासायनिक विधि इत्यादि सम्मिलित हैं। जीवनाशी रसायनों का स्थान समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन की सीमा रेखा पर माना जा सकता है अर्थात जब प्रबंधन के सभी तकनीक असफल हो जाते हैं तथा कीट एवं रोग के प्रकोप को आर्थिक क्षति स्तर पर हो तो कम विषैले जीवनाशी रसायनों का

उचित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।

प्रश्नवाली :

1. बीज उपचार क्यों किया जाता है ?
2. फैरोमेन ट्रैप से क्या समझते हैं ?
3. रस्सी खींचकर किस कीट को नियंत्रित किया जाता है ?
4. भूआ पिल्लू का सस्ता एवं कारगर उपाय क्या है ?
5. प्रकाश प्रपंच का प्रयोग क्यों करते हैं ?
6. जीवनाशी बाजार में किस–किस रूप में उपलब्ध होते हैं ?

खाली जगहों को भरें :

1. ..... खाद कीटों की सुग्राह्यता को कम करता है।
2. ..... कीट का प्रकोप सिंचाई देकर कम किया जाता है।
3. बैक्टेरियल लीफ ब्लाइट का धान में प्रकोप होने पर ..... खाद का प्रयोग बंद कर देना चाहिए।
4. सूत्रकृमि के प्रकोप से जड़ों में .....बन जाती हैं।
5. .....परजीवी के प्रयोग से तितलियों एवं मौथ के अंडों को नष्ट किया जाता है।
6. रोशनी पर आकर्षित होने वाले .....और ..... कीट हैं।

5.4 कीटनाशी का वर्गीकरण (Classification of Insecticides)

प्रवेश विधि के आधार पर वर्गीकरण :

कीट के शरीर में प्रवेश करने के आधार पर कीटनाशियों को तीन रूपों में वर्गीकृत किया गया है।

(i) सम्पर्क विष : ये कीटनाशी कीट के शरीर के सम्पर्क में आते ही उनके अंगों में प्रवेश कर उन्हें मार देते हैं। जैसेः–पायरिथ्रम, रोटेनोन, वी०एच०सी०, डी०डी०टी०, क्लोरडेन आदि।

(ii) उदर विष : इन कीटनाशियों का प्रयोग कीटों के भोजन पर किया जाता है। इस विषाक्त भोजन को खाते ही कीट मर जाते हैं। जैसेः–फॉरमेल्डीहाइड, क्लोराइड, नाइट्रोफिनोल आदि।

(iii) धूमक : यह कीटनाशी वाष्प के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह कीटनाशी श्वसन क्रिया को प्रभावित कर कीट को मार देता है। जैसेः–मिथाइल, ब्रोमाइड, इथायलिन, डायब्रोमाइड आदि।

1. **क्रियाविधि के आधार पर वर्गीकरण :** कीटनाशी कीट के शरीर में प्रवेश कर विभिन्न तंत्रों को प्रभावित करते हैं।

(i) भौतिक विष : कीटनाशी इसमें भौतिक प्रभावों द्वारा कीटों को मार देते हैं। इसमें श्वासरोधी तथा अवघर्षक प्रभाव पाया जाता है। जैसेः– एल्यूमिनियम ऑक्साइड।

(ii) जीवद्रव्यी विष : इसमें कीटनाशी जीवद्रव्य पर प्रभाव डालते हैं जिससे उसकी प्रोटीन का अवक्षेपण हो जाता है। जैसेः– फ्लोराइड, आर्सेनाइड, पारा आदि।

(iii) श्वसन विष : इसमें कीटनाशी कोशकीय श्वसन में बाधा पहुँचाते हैं एवं श्वसन संबंधी इन्जाइमों को निष्क्रिय कर देते है। फलतः कीट मर जाते हैं। जैसेः– हाइड्रोजन सायनाइड, हाइड्रोजन सल्फाइड आदि।

(iv) तंत्रिका विष : कीटनाशी इसमें तंत्रिका तंत्र को प्रभावित कर तंत्रिका आवेग में बाधा पहुँचाते हैं। जैसेः– आरगेनोफास्फेट और कार्बामेट कीटनाशि।

रासायनिक तौर पर कीटनाशीयों के वर्गीकरण :

1. तेल एवं साबुन (Oil and Soaps) :

उड़नशील तेल (Etheral oils) : ये पौधों के ग्रंथि से प्राप्त किये जाते हैं तथा तीव्र गंध वाले होते हैं। ये कीड़ो को आकर्षित एवं दूर भगाने वाले बेट (Bait) तैयार करने में उपयोग किये जाते हैं।

पेट्रोलियम तेल : ये चट्टानों से प्राप्त किये जाते हैं एवं कीड़ों के नियंत्रण में प्रयोग किये जाते हैं।

किरासन तेल : कई कीटनाशी बनाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

2. पौधों से तैयार कीटनाशी (Pesticides of Plant origin) :

पायरेथम (Pyrethrum) : यह स्पर्शीय कीटनाशी है जो गुलदाउदी पौधों के फूल से तैयार किया जाता है। यह भंडारण के कीट को नियंत्रण के लिए प्रयोग किया जाता है।

नीकोटीन (Nicotine) : यह तम्बाकू के पत्तियों से तैयार किया जाता है। यह आंत, स्पार्शीय एवं धूमण की क्रिया करता है। यह मुलायम एवं छोटे– छोटे कीड़े जैसेः लाही, थ्रीस, लीफ हॉपर (फूदका), सफेद मक्खी, पत्ती सुरंगक कीट इत्यादि के नियंत्रण के लिए उपयोग किया जाता है।

रोटेनोन (Rotenone) : यह लेग्यूमिनस पौधों के जड़ों से तैयार किया जाता है यह बाह्य परजीवी जैसेः जूँ, फली एवं लाही, थ्रीप्स, लीफ हॉपर एवं पिल्लूओं के नियंत्रण के लिए उपयोग किया जाता है। परन्तु अभी इसका प्रयोग भारत में बंद हो गया है।

नीम (Neem) : नीम में निम्बीसीडीन पदार्थ होता है जो एण्टीफीडेन्ट गुण का होता है अर्थात कीड़ों की खाने की सुग्राहयता को बहुत ही कम कर देता है। नीम बीज चूर्ण को पानी में मिलाकर टिड्डों, लीफ हॉपर एवं रोमिल कीट के नियंत्रण के लिए छिड़काव करते हैं।

3. आरगेनोक्लोरिन (Organochlorine) कीटनाशी : ये अंत स्पर्शीय विष हैं। इनका अवशेष पौधों, मिट्टी में, पक्षी, मछलियों एवं स्तनधारियों के शरीर के वसा में ज्यादा समय तक रहते हैं। इस वर्ग के कीटनाशी दवाओं का व्यवहार अब बिल्कुल बंद है। जैसे : डी0 डी0 टी0, बी0 एच0 सी0, क्लोरडेन, हेप्टाक्लोर, एल्ड्रीन, डायएल्ड्रीन, एन्ड्रीन, इन्डोसल्फान इत्यादि। इनमें से डी0 डी0 टी0 का अभी भी घर के बाहर प्रयोग में लाया जाता है परन्तु कृषि, जानवरों एवं घर के अंदर प्रयोग बिल्कुल बंद है।

4. आरगेनोफॉस्फोरस (Organophosphorus) कीटनाशी :

मिथाइल पाराथियान (Methyl-Parathion) : यह स्पर्शीय कीटनाशी है। इसका व्यापारिक नाम फॉलीडाल (Folidol), मेटासीड (Metacid) एवं मेट्रोन (metron) है। यह बग, सैनिक कीट एवं उत्तक खाने वाले कीट के नियंत्रण के लिए उपयोग किया जाता है।

एसीफेट (Acephate) : यह आंतरिक विष कीटनाशी है। यह एसीफेट 75% SP नाम से बाजार में उपलब्ध है। यह चूर्ण के रूप में उपलब्ध है।

यह पतंगे– तितलियों एवं रस चूसने वाले कीट के नियंत्रण के लिए प्रभावशाली है।

फोरेट (Phorate) : यह आंतरिक विष कीटनाशी हैं इसका व्यापारिक नाम थीमेट (Thimet) है। यह दानेदार दवा है। यह जड़ भृंग, लीफ हॉपर, उत्तक खाने वाले कीट एवं सफेद मक्खी के लिए प्रभावशाली है।

डायक्लोरवोस या डी0 डी0 वी0 पी0 (Dichlorvaos or DDVP) : यह स्पर्शीय एवं तरल दवा हैं इसका व्यापारिक नाम नूभान, भेपोना, नोगोस है। यह भूआ पिल्लू, सैनिक कीट, सफेद मक्खी एवं लाही कीट के लिए प्रभावशाली है।

डायमेथोएट (Dimethoate) : यह स्पर्शीय एवं आंतरिक विष है। यह तरल (इ0 सी0) रूप में उपलब्ध है। इसका व्यापारिक नाम रोंगर, डायमेथेएट एवं रोक्सीओन है। यह लाही, थ्रीप्स, माइट, सफेद मक्खी, बग एवं पिल्लूओं के नियंत्रण के लिए उपयोगी है।

मोनोक्रोटोफॉस (Monocrotophos) : यह स्पर्शीय एवं आंतरिक विष है। यह तरल (इ0 सी0) रूप में उपलब्ध है। इसका

व्यापारिक नाम नूभाक्रोन, मोनोक्रोन एवं मोनोसिल है। यह लाही, थ्रीप्स, सफेद मक्खी, पर्ण–सुरंगक, फूदका, बग, रेमिल कीट एवं उत्तक को छेद कर खाने वाले कीट के नियंत्रण में उपयोगी है।

क्लोरपारीफॉस (Chlorpyriphos) : यह स्पर्शीय एवं आंतरिक विष हैं। सह डर्सवान नाम (ई0 सी0) एवं दानेदार रूप में उपलब्ध है। यह मिट्टी में रहने वाले कीड़े जैसे : दीमक, सफेद ग्रब जड़ भृंग के नियंत्रण में काफी प्रभावशाली है।

5. कार्बामेट कीटनाशी (Carbamate Insecticides) :

कार्बारिल (Carbaryl) : यह स्पर्शीय एवं आंतरिक विष है। यह घुलनशील पाउडर (WP), धूल (dust) एवं दानेदार (granule) रूपों में बाजार में उपलब्ध है। इसका व्यापारिक नामसेविन, हेक्साविन आदि है। इस दवा का प्रयोग उत्तक छेदक बग, लीफ हॉपर, थ्रीप्स, दीमक, सफेद मक्खी, भुआ पिल्लू, घरेलू कीट एवं जानवरों के बाह्य परजीवी हैं।

कार्बोफ्यूरान (Carbofuran) : यह आंतरिक कीटनाशी विष एवं सूत्रकृमिनाशक विष है। यह तरल (ई0 सी0) एवं दानेदार (Granules) रूप में फ्यूराडान नाम से बाजार में उपलब्ध है। इसका दानेदार रूप ही ज्यादा उपयोग में लाया जाता हैं। यह उत्तक छेदक फल–मक्खी, लाही, सफेद मक्खी, थ्रीप्स, पर्ण–सुरंगक, सफेद ग्रब एवं जड़ भृंग के नियंत्रण के लिए उपयोगी है।

नये कीटनाशी

इमीडाक्लोप्रीड (Imidacloprid) : यह नीयोनिकोटिनाइड ग्रुप का कीटनाशी है। यह स्पर्शीय एवं आंतरिक विश है। यह तरल (एस0 एल0) एवं दानेदार रूप में कॉनफीडोर, मेरिट, एडमायर एवं गॉचो इत्यादि व्यापारिक नामों से बाजार में उपलब्ध है यह रस चूसने वाले कीड़े जैसे :– लाही, लीफ हॉपर, सफेद मक्खी एवं थ्रीप्स के नियंत्रण के लिए काफी प्रभावशाली है। यह भृंग एवं पिल्लूओं के नियंत्रण के लिए भी प्रभावशाली है।

स्पीनोसैड (Spinosad) : यह एक्टीनोमाइसीटिज ग्रुप के सैकरोपोलीस्पोरा स्पीनोसा जीवाणु से तैयार किया गया कीटनाशी है। यह ट्रेसर, सक्सेस, स्पीन टॉर नाम से बाजार में उपलब्ध हैं यह आंतरिक विष है। यह फली छेदक, लीफ हॉपर, लाही एवं सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए लाभकारी है।

कवकनाशी का वर्गीकरण (Classification of Fungicides) :

1. प्रयुक्त तत्व के आधार पर कवकनाशी का वर्गीकरण:

(i) गन्धक कवकनाशी : प्राचीन काल से ही गंधक का प्रयोग कवकनाशी के रूप में किया जाता रहा है। जैसे:– तत्वीय गंधक, चूना गंधक।

(ii) ताम्र कवकनाशी : सन् 1807 ई० में प्रोवोस्ट (Provost) में नीला थोथा (कॉपर सल्फेट) का प्रयोग गेहूँ के बंट रोग को नियंत्रण करने लिए इससे बीज उपचार किया था।

सन् 1882 ई० में प्रो० मिर्लाडेट (Prof. Millardet) ने अंगूर के मृदुरोमिल आसिता रोग के नियंत्रण के लिए बोर्डो मिश्रण का प्रयोग किया था।

(iii) थायोकार्बामाइट कवकनाशी : इसका प्रयोग मुख्यतः बीज उपचार के लिए किया जाता है।

जैसे:– थिरम (Thiram)।

लौह युक्त – फरवाम (Ferbam)

जिंक युक्त – जिरम (Ziram)

2. प्रवेश विधि के आधार पर कवकनाशी का वर्गीकरण:–

(i) सम्पर्क कवकनाशी – कैप्टान, थिरम।

(ii) अंतर्ग्रहण कवकनाशी–

(क) कार्बोक्सिन – विटावैक्स।

(ख) ऑक्सीकार्बोक्सिन – प्लांटावैक्स।

(ग) पाइरीमिडिन वर्ग – मिथाईरिमोल, इथाईरिमोल।

(घ) वेंजिमिडाजोल – बैविस्टीन, वेनलेट।

रोग एवं कीटनाशी रसायनों के घातक प्रभाव के लक्षण

बच्चों, जहाँ तक रोग एवं कीटनाशी रसायनों का प्रश्न है, ये भले ही विभिन्न रोगों अथवा कीटों की रोकथाम में अपनी भूमिका निभाते हों, पर वे अंततः है तो जहर ही और यदि जहर हैं, तो निश्चित रूप से ये आम आदमी कि लिए भी स्वास्थ्यवर्धक नहीं हो सकते हैं। इनके घातक प्रभाव के लक्षण निम्न हैं :

शरीर पर कीट विष पड़ जाने पर विष शरीर के चमड़े द्वारा अवशोषित हो जाता है और चमड़े पर फफोला होने लगते हैं, खुजलाहट होती है और चमड़ा नीला पड़ने लगता है।

सिर में चक्कर आना, जी मितलाना

उल्टी होना, डायरिया, पेट में दर्द होना

आँख में कीटनाशी जाने पर आँख खुजलाहट, धुँधला दिखाई पड़ना, आँख में दर्द होना, अस्थायी अंधापन होना

बेहोश होना, दौरा पड़ना

कुछ कीटनाशी विषों से फ्यूम्स निकलते रहते हैं जो छिड़काव करते समय या दवा तैयार समय फेफड़े के अंदर चले जाते हैं, जिससे रोगी का दम घुटने लगता है।

प्राथमिक उपचार (First Aid)

पीड़कनाशक रसायन के घातक प्रभाव से बचने के लिए यह आवश्यकता है कि उन पर लिखे निर्देशोंका पालन सही प्रकार सक किया जाये। क्योंकि जरा–सी असावधानी होने पर जान से हाथ धोना पड़ सकता है । इन रसायनों के कुप्रभाव का यदि कोई व्यक्ति गलती से शिकार हो जाये तो तुरंत निम्न उपचार करना चाहिए।

विष शरीर पर पड़ जाये तब उस भाग को साफ पानी से अच्छी तरह धोना चाहिए। प्रदूषित वस्त्र को शीघ्र हटा देना चाहिए। कपड़े से ढके हुए शरीर के अंग को साफ पानी से धोना चाहिए। अगर शरीर में खुजलाहट हो रही हो या फफोले हों तो किसी क्रीम को उस भाग पर लगाना चाहिए। अगर विष शरीर में पहुँच गया हो तो डाक्टर की सलाह लेनी चाहिए।

असावधानी के कारण कभी–कभी कीटनाशक विष आँख के अंदर चला जाता है। ऐसी स्थिति में आँख को पानी से अच्छी तरह साफ करना चाहिए। इससे आँख में खुजलाहट कम हो जाती है। अगर खुजलाहट अधिक हो तो डाक्टर की सलाह लेनी चाहिए।

पीड़कनाशक के श्वास द्वारा फेफड़े में जाने पर रोगी की तुरंत कार्यस्थान से हटाकर स्थान पर रखना चाहिए तथा शरीर से वस्त्र हटा देना चाहिए एवं गला ढीला रखना चाहिए। आवश्यकतानुसार कृत्रिम रूप से ऑक्सीजन देना चाहिए।

यदि पीड़कनाशक मुँह के अंदर चला जाये और उल्टी होने लगे या पेट में दर्द हो या डायरिया हो तो रोगी को शीघ्र उल्टी कराने के लिए निम्न पदार्थों का प्रयोग कर सकते हैं –

1. पीसी हुई जली डबल रोटी –2 भाग
2. सान्द्र चाय– 1 भाग
3. मिल्क ऑफ मैग्नेशिया– 1 भाग

उपर्युक्त दवा को एक बड़े चम्मच में पानी के साथ मिलाकर पिलाना चाहिए या, 30 ग्राम चारकोल को 100 मि0 ली0 पानी में मिलाकर पिलाना चाहिए। कीट विष को शरीर से बाहर निकालने के लिए सोडियम या मैग्नेशियम सल्फेट की 20 ग्राम मात्रा 30 मि0 ली0 पानी में मिलाकर रोगी को पिलाना चाहिए।

अगर रोगी चूहा मारने वाला विष से ग्रस्त हो तो नमक–पानी का घोल का पिलाकर उल्टी कराना चाहिए। इसके बाद विटामिन को खिलाना चाहिए।

आरगेनोफास्फेट क्लीटनाशी के जहरीले प्रभाव से रोगी ग्रस्त हो तो एट्रोपीन सल्फेट की सुई 2–4 मि0 ग्रा0 प्रत्येक 5–10 मिनट पर देनी चाहिए। अगर जहर के असर से रोगी में बेचैनी हो तो 5–10 ग्राम डायजीपाम की सुई मांसपेशी में देना चाहिए।

अगर आरगेनोक्लोरीन कीटनाशी विष से रोगी ग्रस्त हो तो फेनबारवीटोल 0.7 ग्राम या पेन्टाबारवीटोल 0.25 से 0.5 ग्राम प्रतिदिन देना चाहिए। रोगी को प्रोटीनयुक्त तथा वसाहीन भोजन देना चाहिए।

यदि रोगी कार्बामेट कीटनाशी जहर के प्रभाव से ग्रस्त हो तो टोक्सोगोनीन की सुई मांसपेशी में देनी चाहिए।

जब रोगी धुमण विष से ग्रसित हो तो रोगी को ऑक्सीजन कृत्रिम रूप से देनी चाहिए। एमीनोफायलीन 1 मि0 ग्रा0 प्रति कि0 ग्रा0 वनज के अनुसार रोगी की मांसपेशी में सुई देनी चाहिए।

पीड़कनाशक को प्रयोग में सावधानियाँ

किसी भी फसल–सुरक्षा विधि को अपनाने से पूर्व कीट एवं रोग विशेषज्ञों की समुचित सलाह आवश्यक है, अन्यथा गलत चुनाव एवं असहज प्रयोग विधियों के चलते फसल के साथ ही, धन–जन की भी हानि उठानी पड़ सकती है। अतः फसल उत्पादकों को चाहिए कि वे कम–से–कम जहरीले रसायनों का इस्तेमाल करें, वह भी विशेषज्ञों की सलाह पर ही। रसायनों के प्रयोग से पूर्व पौकिंग के ऊपर उद्धृत निर्देशों का भली–भाँति अध्ययन करना आवश्यक है।

विषाक्तता के आधार पर इन रसायनों को चार श्रेणियों में निर्धारित की गयी है। इन्हें विभिन्न रंगों के तिकोनों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है ताकि सामान्य ज्ञान एवं सहज सावधानी के आधार पर भी इनके सुरक्षित प्रयोग हो सके। अत्यधिक विषैले रसायन (कार्बोफ्यूरान एवं फोरेट आदि) गहरे लाल, अधिक विषैले रसायन (मोनोक्रोटोफॉस, इंडोसल्फान आदि) गहरे पीले मध्यम विषैले रसायन कार्बेन्डाजिम एवं एल्डिन आदि) एवं कम विषैले रसायन (मैंकोजेब आदि) गहरे हरे तिकानों के द्वारा प्रदर्शित किये जाते हैं।

पीड़कनाशक दवा के चुनाव के बाद उसके खरीद में भी सावधानी बरतनी चाहिए। दवा के प्रभाव का एक निर्धारित समय होता है, जिसका प्रभाव कीट व्याधि के नियंत्रण पर पड़ता है। दवा का समय समाप्त हो जाने पर इसका असर कम हो जाता है। अतः दवा खरीदते समय दवा के पैकेट या शीशी पर लगे टेबुल पर दवा का नाम, कंपनी का नाम, एवं अवसान की तिथि, वैच नंबर, विषैला होने का चिह्न इत्यादि पर ध्यान देना चाहिए।

छिड़काव में सावधानी :

छिड़काव या भुरकाव यंत्रों के प्रयोग से पहले अच्छी तरह जाँच कर लेनी चाहिए।

दवा का प्रयोग करते समय मुँह नाक को गैस मास्क या कपड़े की पट्टी से ढक लेना चाहिए।

मौसम तथा वातावरण की स्थिति को देखकर ही दवा का प्रयोग करना चाहिए। वर्षा होने की स्थिति में दवा का प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि वर्षा के कारण दवा घुल जाती है।

दवा का प्रयोग हवा के विपरीत दिशा में नहीं करना चाहिए, क्योंकि कार्य करने वाले व्यक्ति इससे प्रभावित होते हैं।

दवा का प्रयोग सुबह या शाम में करना चाहिए। भुरकाव सुबह करना चाहिए क्योंकि ओस की बूँदे दवा को पौधों पर टिकाये रखने में सहायक होती है।

तैयार कच्ची सब्जियों या फलों को रसायनों के छिड़काव से पूर्व ही तोड़ लेना चाहिए। छिड़काव के बाद उनके सुरक्षाकाल (वेटिंग पीरियड) के बाद ही तोड़कर खाना चाहिए।

छिड़काव के बाद बचे घोल, शीशियों एवं डिब्बों को गड्डे बनाकर डाल / गाड़ देना चाहिए।

छिड़काव यंत्र एवं घोल वाले बर्त्तन को छिड़काव के बाद पानी से अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिए।

दवा प्रयोग करने के पश्चात हाथ–पैर एवं कपड़ों को अच्छी तरह साबुन से साफ कर लेना चाहिए।

जिन खेतों में दवा का प्रयोग हो चुका है, वहाँ लाल रंग के कपड़े लकड़ी में लगाकर गाड़ देना चाहिए ताकि लोगों को पता चल सके कि क्षेत्र विशेष में रसायनों की घातकता विद्यमान है। इसकी सूचना लकड़ी के बोर्ड में जहरीली दवा का प्रयोग हुआ है भी लिखकर दी जा सकती है।

प्रश्नवाली :

1. कीटनाशी के विभिन्न प्रकार कौन–कौन से हैं ?
2. कवकनाशी के विभिन्न प्रकार कौन–कौन– से हैं ?
3. दो नये कीटनाशी का नाम बतायें ।
4. पीड़कनाशी के घातक प्रभाव के लक्षण क्या हैं ?
5. पीड़कनाशी के कुप्रभाव को कैसे कम किया जा सकता है ?
6. पीड़कनाशक के रख– रखाव, प्रयोग के पहले एवं प्रयोग के बाद क्या–क्या सावधानियाँ बरतनी चाहिए।

5.5 कीट एवं रोग के विकास में वातावरण का प्रभाव

रोग एवं कीटों के विकास के लिए तीन प्रमुख घटक यथा परपोषी (मेजबान) पौधे (Host Plant), रोग कारक (Pathogen) और वातावरण (Environment) होते है जिसे पीड़क त्रिकोण (Pest Triangle) कहते हैं। रोग एवं कीटों के विकास में रोग कारक के लिए अनुकूल वातावरण का होना आवश्यक है।

तापमान (Temperature)

यह कीड़ों के जीवन–चक्र पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालता है। कीड़े के शरीर का तापमान वातावरण के तापमान के अनुसार ही घटता–बढ़ता है। कुछ कीड़े गर्म वातावरण तो कुछ ठंड पसंद करते हैं। कुछ कीड़े जैसे : चीरोनोमिड लार्वा 55° सें0 पर भी जीवित रहते हैं और स्नोभृंग जैसे कीट 0° सें0 के नीचे तापमान पर भी जीवित रहते हैं। ग्रास हॉपर (फूदका) 32° सें0 पर 20 से 30 गुणा ज्यादा अंडे देती है। डायमंड बैक मौथ 18° सें0 पर ज्यादा अंडे देती है। रोग कारक फफूंद जैसे पिथियम, फाइटोथोरा, राइजोक्टोनिया, मैक्रोफोमिना, फ्यूजेरियम, विर्टिसीलियम आदि के जीवाणु (Spores) जो मिट्टी में मौजूद रहते हैं। कम तापमान पर अधिक वृद्धि एवं सकिय होकर रोग को तेजी से फैलाते हैं, जिसमें आर्द्र गलन रोग, आलू का पिछात झुलसा रोग, गेहूं का पीला हरदा रोग प्रमुख हैं। अपेक्षाकृत अधिक तापमान पर शुष्क जड़ गलन, चूर्णी रोग तथा उकठा रोग आदि का प्रकोप अधिक होता है।

आर्द्रता (Moisture) का प्रभाव

वातावरण में नमी या आर्द्रता भी एक हद तक कीटों एवं रोगों के प्रजनन एवं गुणन में सहायक होती है। कीटों पर आक्रमण करनेवाले फफूँद के लिए उच्च नमी की आवश्यकता होती है। उच्च आर्द्रता धान का भूरा मधुआ कीट की आक्रमकता को बढ़ाता है। लाही कीट का फसलों पर आक्रमण के लिए उच्च आर्द्रता आवश्यकता है। दीमक 90–95 प्रतिशत आर्द्रता पसंद करती है और 100% आर्द्रता पर यह बहुत दिनों तक भुखा रह सकती है। धान का घुन (भंडारण कीट) 70% आर्द्रता पर ज्यादा अंडे देती है परन्तु 34% आर्द्रता पर बहुत कम अंडे देती है। रोग–व्याधियों का विकास रोग कारक के जीवाणु (Spores) के वृद्धि एवं सक्रियता आर्द्रता/नमी द्वारा प्रभावित होती है। अधिक आर्द्रता के कारण होने वाले प्रमुख रोग– आर्द्र गलन रोग, आलू का पिछात झुलसा रोग, स्तंभ मूल विगलन रोग, स्तंभ मूल गलन रोग एवं सब्जियों में सूत्रकृमि द्वारा जड़ ग्रंथी रोग प्रमुख हैं। कम आर्द्रता/नमी पर होने वाले प्रमुख रोग– चूर्णी आसिता रोग, शुष्क जड़ गलन, उकठा रोग, आलू का स्कैब रोग, धान का ब्लास्ट रोग एवं भूरी चित्ती रोग प्रमुख हैं।

प्रकाश (Light)

प्रकृति के दिन और रात के तारतम्य को जीवों द्वारा दी जाने वाली प्रतिक्रिया को फोटोपेरीओडिज्म (Photoperiodism) कहते हैं।

कीटों पर प्रकाश के प्रभाव निम्न है : लाही छोटे दिनों में लैंगिक लंबे दिनों में अलैंगिक प्रजनन करता है। फल मक्खी केवल प्रकाश में ही अंडे देती है। मच्छर सूर्यास्त के बाद (गोधूलि) एवं सूर्योदय के पहले (भोर) में ही ज्यादा सक्रिय रहते हैं। तना छेदक ,भूआ पिल्लू, फली छेदक, फल छेदक इत्यादि अंधकार में अंडे देती है। प्रकाश की तीव्रता एवं अवधि रोगों के विकास में सहायक होती है। टमाटर में उकठा रोग तथा राई के चूर्णी रोग का विकास प्रायः कम तीव्रता वाले प्रकाश में अधिक होता हैं। अधिक तीव्रता वाले प्रकाश में गेंहूँ का काला हरदा रोग तथा तीसी का हरदा रोग का विकास अधिक होता है।

हवा (wind) :

हवा कीटों के इधर–उधर फैलने में सहायक होती है। हवा के साथ फली छेदक (Helicoverpa) के पतंगे 90 किलोमीटर तक चले जाते हैं और इस तरह जहाँ इसका प्रकोप नहीं हैं वहाँ ये फैल जाते हैं। साथ ही लाही एवं माइट भी हवा द्वारा एक जगह से दूसरे जगह पहुँच जाते हैं। अप्रत्यक्ष रूप से हवा तापमान एवं आर्द्रता पर भी प्रभाव डालती है। बहुत सारे रोगों का प्रसार एवं विकास हवा के द्वारा होता है। कवक एवं कीटाणु के जीवाणु (Spores) का प्रसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर हवा के द्वारा होता है। इसके फलस्वरूप रोग फैलते हैं। चूर्णी रोग एवं हरदा रोग का प्रसार हवा के द्वारा होता है।

मृदा पी०एच० (Soil pH)

मिट्टी में मौजूद रोग जनक के जीवाणु (Spores) की वृद्धि एवं प्रसार मृदा पी०एच० द्वारा प्रभावित होती है। कुछ रोगों का विकास कम पी०एच० यानी अम्लीय मिट्टी में अधिक होता है, जैसे– टमाटर का उकठा रोग (Wilt) एवं आलू का वार्ट (Wart) रोग। अधिक पी०एच० (क्षारीय मिट्टी) में आलू का स्कैब (Scab) रोग एवं कपास का जड़ गलन रोग का विकास अधिक होता है।

प्रश्नवाली :

1. तापक्रम का प्रभाव पीड़कों पर किस प्रकार पड़ता हैं ?
2. आर्द्रता का प्रभाव पीड़कों के वृद्धि में किस प्रकार सहायक है ?
3. कीट एवं रोग के प्रसार में हवा का क्या योगदान है ?

*****